संसार में दूसरों की गलतियाँ खोजने से बढ़कर सरल काम कोई और नहीं है।

—दुर्गाप्रसाद खत्री

आज-कल की हिन्दी

पुस्तक के मुख्य उद्देश्य

१. जो लोग अच्छी हिन्दी लिखना चाहते हैं उनकी सहायता करना।

२. जो लोग थोड़े में और खूबसूरती से अपने भाव प्रकट करना चाहते हैं उनका मार्ग-दर्शन करना।

३. जो लोग हिन्दी भाषा में होने वाली सामान्य भूलों से अपरिचित हों उन्हें उन भूलों से सावधान करना।

आज-कल की हिन्दी

डा० बदरीनाथ कपूर

काशक : शब्द-लोक प्रकाशन, वाराणसी २

वितरक : लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

सितम्बर १६६६

मुद्रक—श्री हरि प्रेस, सी० ६/७३ बागबरियार सिंह, वाराणसी
प्रकाशक—शब्द-लोक प्रकाशन, ४७ लाजपत नगर, वाराणसी २.
मूल्य ४)

आचार्य
महावीरप्रसाद जी द्विवेदी
को

लेखक की अन्य कृतियाँ

- वेसिक हिन्दी
- हिन्दी पर्यायों का भाषागत अध्ययन
- वैज्ञानिक परिभाषा कोश
- राजकमल अंग्रेजी हिंदी पर्यायवाची कोश
- राजगुरु

आमुख

इदमन्धंतमः कृत्स्नं जायेतभुवनत्रयम् ।
यदि शब्दाह्वयं ज्योतिरासंसारं न दीप्यते ।।

काव्यादर्श १.४

यदि शब्द-ज्योति अपना प्रकाश न फैलाती रहे, तो तीनों भुवन अन्धकार में विलीन हो जाएँ । दण्डी का यह कथन महत्त्वपूर्ण है । शब्दों का स्वरूप गूढ़ होता है, विरले ही उनके अन्तस्तल में प्रविष्ट होकर उनके रहस्य को समझ पाते हैं और उनका समीचीन प्रयोग कर पाते हैं । इसी लिए प्राचीन साहित्यकारों ने शब्द-तत्त्व की महत्ता का पुनः पुनः प्रतिपादन किया है । लेखक का लक्ष्य होता है—अपने मानस में उद्वेल्लित भावना, चिन्तन तथा कल्पना आदि को पाठक के हृदय में उद्भावित करना । इसके लिए उसे शब्द-चयन, वाक्य-विन्यास, व्याकरण के नियमों आदि के प्रति जागरूक रहना पड़ता है । अज्ञान और प्रमाद लेखक के शत्रु हैं । ये उसे उसके लक्ष्य से गिरा देते हैं । ऐसा लेखक भाषा तथा समाज को विकृत कर देता है । डा० बदरीनाथ कपूर ने इन पहलुओं पर विचार करके हिन्दी के लेखकों और पाठकों को उचित दृष्टि प्रदान करने की इच्छा से इस पुस्तक की रचना की है, ऐसा प्रतीत होता है । उनकी इस कृति में अनेक रहस्यमय पीयूष-कणिकाएँ सङ्गृहीत हैं । पुस्तक में ऐसी सामग्री सङ्केतित तथा सन्निहित है, जिसके आधार पर हिन्दी भाषा का भव्य, स्वच्छ तथा विशाल प्रासाद निर्मित किया जा सकता है । लेखक के मानस में हिन्दी भाषा के निर्दोष स्वरूप का स्पष्ट चित्र अङ्कित है । उसकी झाँकी इस रचना में प्रस्तुत की गयी है । यह निश्चित ही दर्शनीय और प्रशंसनीय है ।

डा० कपूर ने अनेक उद्धरण प्रस्तुत करके यह दिखाया है कि उनमें शिथिल पद-योजना, अनावश्यक पद-प्रयोग, अभीष्ट भाव को व्यक्त करने में अक्षम पदावली, व्याकरण के नियमों का उल्लङ्घन आदि दोष विद्यमान हैं। मर्मज्ञ लेखक ने त्रुटियों का निर्देश करके उनका परिमार्जन भी किया है। परिमार्जित रूपों को पढ़ते ही सुधी पाठक डा० कपूर की प्रतिभा, सूझ तथा सूक्ष्मदृष्टि से परिचित हो जाएँगे। प्रस्तुत रचना के द्वारा डा० कपूर हिन्दी भाषा का भावी स्वरूप निर्धारित करना चाहते हैं। वे लेखकों की उस पीढ़ी के निर्माण में सन्नद्ध प्रतीत होते हैं, जो परिमार्जित भाषा का प्रयोग करे, हिन्दी की प्रकृति को अक्षुण्ण बनाये रखे और सत्साहित्य की सर्जना से हिन्दी का प्राङ्गण भर दे।

हिन्दी के अधिकांश लेखक अंग्रेजी के वाक्यों का हिन्दी में अनुवाद तो कर लेते हैं, पर उनमें हिन्दी की आत्मा सञ्चारित नहीं कर पाते। डा० कपूर ने अनेक उदाहरणों के द्वारा इस कथन की पुष्टि की है। वे अनुवाद की समस्या पर प्रकाश डालते हैं और उसके यथार्थ रूप की ओर सङ्केत करते हैं। उनका यह विवेचन बहुत ही सारगर्भित है। हिन्दी की भावी समृद्धि के लिए उसमें नई व्यञ्जना-शक्ति लाना अत्यन्त आवश्यक है। एतदर्थ हम संसार की उन्नत भाषाओं की सौन्दर्य से सम्बन्ध रखनेवाली बातें तो अवश्य ग्रहण करें, पर हिन्दी पर ऐसी बातें न लादते चलें, जो उसे दुर्बोध बना दें और उसका रूप बिगाड़ दें।

डा० कपूर एक निर्भीक आलोचक की दृष्टि से हिन्दी के लेखकों के अनेक दोषों का निरूपण करते हैं। यह सम्भव है कि कुछ स्थलों पर लेखक से किसी सहृदय का भी मतभेद हो, पर अन्यत्र तो वह उनके निर्दोष तथा स्पष्ट विवेचन से प्रभावित होगा और उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करेगा।

हिन्दी के लेखक तथा पाठक इस पुस्तक में दिखाए हुए मार्ग पर चलकर हिन्दी भाषा को समृद्ध बनायेंगे और उसके स्वत्व को विलीन न होने देंगे, ऐसी आशा है। प्रस्तुत रचना प्रत्येक पाठक का उपकार करेगी और उसे पदे पदे प्रमुदित करेगी, ऐसा विश्वास है।

विद्वान् लेखक का प्रयास स्तुत्य है। उनकी रचना अनूठी और अनर्घ्य है। वे अपनी विलक्षण शक्ति से भारत-भारती का कोप भरते रहें, यही अपनी शुभ-कामना है।

अमरनाथ पाण्डेय

संस्कृत विभाग

काशी विद्यापीठ

कृष्ण जन्माष्टमी

संवत् २०२३ वि०

अपनी ओर से

मैं शुद्धतावादी नहीं हूँ। जीवित भाषा फलती-फूलती और बढ़ती-बदलती चलती है। परिवर्तन-परिवर्द्धन के युग में क्या शुद्ध है और क्या अशुद्ध इसका निर्णय न तो संभव ही है और न समीचीन ही। अगर कुछ आवश्यक है तो बस इतना ही कि कथन में सरलता और स्पष्टता हो, सुन्दरता और सजीवता हो, स्वाभाविकता और सार्थकता हो।

भाषा उस वाणी का रूप है जिसे हम सरस्वती देवी मानते हैं। वह पवित्र भी है और पूज्य भी। जो लोग अपनी भाषा का सचमुच महत्त्व बढ़ाना चाहते हों उन्हें इन दोनों बातों का सदा ध्यान रखना चाहिए। वह पवित्र है इसलिए उसे दूषित नहीं करना चाहिए, वह पूज्य है इसलिए उसकी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। जीवित भाषाएँ अन्य भाषाओं से शब्द भी ग्रहण करती हैं और प्रयोग-विधाएँ भी, क्योंकि इससे उनका शब्द भण्डार भी उन्नत होता है और अभिव्यंजना-शक्ति भी विकसित होती है। बाहरी चीजें अलंकारों के रूप में ही होनी चाहिए, काँटों के रूप में नहीं। यदि वे अलंकार हैं तो ग्राह्य हैं, स्तुत्य हैं और पूज्य हैं। यदि वे काँटे हैं तो अग्राह्य हैं, त्याज्य हैं और दूषित हैं। काँटे अंगों में चुभने पर कष्ट ही देते हैं।

भूल हर एक से होती है। भूलों से सदा बचते रहना प्रायः संभव भी नहीं है। मनुष्य का स्वभाव ही भूल करना है। परन्तु यह आवश्यक है कि हम उन भूलों से परिचित हों और उनसे बचने का प्रयास तो करें। और वह भी इसलिए कि हमारे विचारों तथा भावों से परिचित होने के लिए पाठकों को भ्रम, कठिनता या उलझन न हो। यह आवश्यक नहीं है कि पाठक हमारी ही रचनाएँ पढ़ें परन्तु यह अत्यंत आवश्यक है कि वे

हमारी रचनाओं की ओर आकृष्ट हों। कोई बात कही जाए वह ठीक तरह से कही जाए—सुन्दर रूप में कही जाए। यही भावना हिन्दी लेखकों के मन में जाग्रत करने के लिए यह पुस्तक लिखी गई है। एक बात और। अच्छे और मान्य लेखक की की हुई भूलें दूसरे बहुत से लोगों को भ्रम में भी डाल सकती हैं और वे अनजान में वैसी भूलों का अनुसरण कर के भूलों का क्षेत्र और विस्तृत कर सकते हैं जो कभी अभीष्ट या वांछनीय नहीं माना जा सकता।

जिन विद्वानों की भूलें इस पुस्तक में उद्धृत की गयी हैं, उनमें से कुछ तो मेरे गुरुजन हैं, कुछ परिचित मित्र हैं, और कुछ अपरिचित सज्जन। अनेक स्थलों पर इन महानुभावों की भाषा बहुत ही सुन्दर बनी है[1] जो अभिनन्दनीय है। परन्तु कुछ स्थलों पर उन से भी चूक हो गई है। भविष्य में इनकी रचनाओं में ऐसी छोटी-मोटी भूलों की आवृत्ति न हो, यह मेरी पहली कामना है। मेरे अन्य मित्र भी लाभान्वित हों, तथा अपनी मातृभाषा का रूप निखारने में वे भी सफल सहयोगी बनें, यह मेरी दूसरी कामना है। हिन्दी में आनेवाले नये लेखक भी इसे देखकर कुछ सचेत और सतर्क हो जाएँ यह मेरी तीसरी कामना है।

दूसरों की भूलें ढूँढ़ते रहने की मेरी प्रवृत्ति नहीं है—संस्कार मात्र है। समय-समय पर जो-जो बातें खटकीं और उस समय हाथ में संयोग से कागज-पेंसिल रही तो उन्हें टाँक लिया। डायरी कभी रखी नहीं। कागज-पत्र कभी सँभाले नहीं। जो रहा सो रहा जो गया सो गया। 'मराल' का सम्पादन करते समय अपने लेखकों की रचनाओं को सुधार कर छापा करता था। उनके लेखों में से कुछ की पांडुलिपि अब भी मेरे पास है। मूल की कुछ भूलें भी मैंने ले ली हैं, यद्यपि उन्हें शुद्ध करके ही प्रकाशित किया गया था।

---

१ ऐसे स्थलों के चयन की ओर भी मैं प्रयत्नशील हूँ।

मैं सिर्फ यही सोचकर इस कार्य में प्रवृत्त हुआ कि हिन्दी भाषा का मानक स्वरूप स्थिर करने में जो बातें बाधक हो रही हैं, उन्हें देखकर भी न देखना और समझ कर भी न कहना, अनुचित होगा। कारण यह है कि हिन्दी के लिए यह समय एक नये साँचे में ढलने का है। यह साँचा जहाँ तक हो सके सब प्रकार की त्रुटियों और दोषों से रहित होना चाहिए। अतः समय रहते ही हमारा, आपका और सबका सचेत हो जाना परम आवश्यक है।

किसी का दिल दुखाना या उसे चोट पहुँचाना मेरा उद्देश्य नहीं है। काम को काम समझकर मैं प्रवृत्त हुआ हूँ, उसका सपादन किया है और आपके सामने नम्रतापूर्वक रख रहा हूँ।

—बदरीनाथ कपूर

जन्म-दिवस

१६ सितम्बर ६६

विषय-सूची

१ : दुर्बोध हिन्दी

तपस्या, त्याग और आत्मबलिदान के द्वारा सीखी हुई भाषा सहज भाषा है।

— डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी

अभिव्यक्ति की सहजता तथा सरलता लेखक की कसौटी है और यदि वह इस कसौटी पर खरा नहीं उतर सकता तो उसे इस कसौटी को दोष देने का अधिकार नहीं मिल जाता।

— कन्हैयालाल ओझा

★ ★
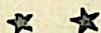
भाषा अभिव्यक्ति का कोई सर्वश्रेष्ठ साधन नहीं है। किसी कोमल अनुभूति, किसी सूक्ष्म विचार अथवा किसी मनोहारी तथ्य का शब्दों में पूर्णतः यथातथ्य वर्णन करना संभव नहीं; फिर भी कला की सार्थकता इसी में है कि जहाँ तक बन पड़े यथातथ्यता लानी ही चाहिए। यद्यपि भाषा साध्य नहीं है, साधन मात्र है तो भी इसकी प्रयोजनीयता इसी में है कि अधिक से अधिक भाव व्यंजन कर सके।

सरलता, स्पष्टता और संक्षिप्तता अच्छी भाषा के तीन आवश्यक गुण हैं। सरलता से अभिप्राय यह है कि जो कुछ कहा जाए वह सब के समझने योग्य और प्रचलित शब्दों में कहा जाए तथा सीधे-सादे और सर्व-विदित ढंग से कहा जाए। स्पष्टता से अभिप्राय यह है कि लेखक जो कुछ कहना चाहता हो वह भाव प्रयुक्त शब्दों से पूरा पूरा व्यक्त हो जाना चाहिए। ऐसा न हो कि स्वयं लेखक ही अपनी बात का कुछ अंश खा जाए अथवा श्रोता के मन में किसी प्रकार का भ्रम या संदेह उत्पन्न हो। संक्षिप्तता से अभिप्राय यह है कि जो कुछ कहा जाए, थोड़े में कहा जाए—कम से कम शब्दों में कहा जाए। लेखक को शब्दों के प्रयोग में मितव्ययी होना चाहिए। निरर्थक शब्द तथा व्यर्थ का विस्तार भी भाषा को बोझिल बना देता है।

चाहे सरलता का अभाव हो, चाहे स्पष्टता का और चाहे निरर्थक शब्दों की अधिकता हो; भाषा कठिन तथा पेचीली और फलतः दुर्बोध हो जाती है। सीधे-सादे शब्दों में कही हुई जो बात सरलता से तथा तत्क्षण

समझी जा सकती है, दुर्बोध भाषा में लिखी हुई वही बात समझने के लिए विशेष प्रयत्न तथा माथा पच्ची करनी पड़ती है ऐसा स्थिति पाठक के लिए कष्टकर होती है। लेखक यदि अपनी लिखी हुई रचना को दो तीन बार पढ़कर सरल, स्पष्ट और संक्षिप्त नहीं बनाता और अपना थोड़ा-सा समय बचा जाता है तो उसके इस समय के बदले कितने पाठकों का कितना समय नष्ट होगा, इसका उसे कुछ अनुमान भी लगा लेना चाहिए। लेखक का कोई निजी ऊँचा मानक स्तर हो सकता है परन्तु उसके फेर में पाठकों के सामान्य स्तर की अवज्ञा नहीं की जा सकती।

अब तो गुरु-शिष्य परम्परा का अन्त होता जा रहा है; इसलिए किसी से यह कहना कि लिखने से पहले वह किसी अच्छे लेखक से प्रशिक्षण प्राप्त करे, बाहुल्य होगी। फिर भी इतना जरूर कहूँगा कि पहले हमें प्रयत्न और अभ्यास करके भाषा के सौंदर्य का पारखी बनना चाहिए और तब लिखने के लिए कलम उठानी चाहिए। ऐसा करके जो कुछ लिखा जाएगा वही भाषा का सहज, सजीव और दीर्घ-जीवी रूप होगा।

हिन्दी पुस्तकों, पत्र-पत्रिकाओं से उद्धृत कुछ निम्नलिखित वाक्यों पर पहले स्वयं विचार कीजिए, उनमें सरलता तथा स्पष्टता लाने का प्रयत्न कीजिए और तब उनके समुचित हिन्दी रूप देखिए :—

उसका शरीर एक बार ही देखने पर वह किसी खिलाड़ी का शरीर देख पड़ता था।

—नरेन्द्र राना (लालसा)

यहाँ लेखक महोदय का यह आशय नहीं है कि 'उसका शरीर...... किसी खिलाड़ी का शरीर' लगता था बल्कि आशय है कि उसका शरीर

खिलाड़ी के शरीर का सा लगता था। उक्त का सरल, स्पष्ट और संक्षिप्त रूप होगा—देखने में उसका शरीर खिलाड़ी का सा लगता था।

मैं अपने थके शरीर को लेकर जब चारपाई पर लेटती हूँ ...।

—रजनी पनिकर (सैनिक की पत्नी)

क्या शरीर को छोड़कर भी लेटा जाता है ? उक्त के सरल रूप हो सकते हैं :—

(क) थक जाने पर जब मैं चारपाई पर लेटती हूँ...।

(ख) जब मैं थक कर चारपाई पर लेटती हूँ...।

यदि मैं इन्कार करूँ कि अपने छोटे-छोटे नन्हे मुन्नों के बीच मुझे खुशी न होती थी, तो···।

—शिवशंकर त्रिवेदी (अनोखी तृप्ति)

हिन्दी में दोहरे नकारात्मक वाक्य प्रायः नहीं लिखे जाते। इस दृष्टि से 'यदि मैं इन्कार करूँ' की जगह होना चाहिए—'यदि मैं कहूँ।' नन्हे-मुन्ने छोटे-छोटे ही होते हैं, बड़े-बड़े नहीं होते; इसलिए 'छोटे-छोटे' पद व्यर्थ है। वाक्य का सरल और संक्षिप्त रूप होगा— यदि मैं कहूँ कि अपने नन्हे-मुन्नों के बीच मुझे खुशी नहीं होती थी, तो···।'

यदि वाक्य का दोहरा नकारात्मक रूप ही ग्रहण करना अभीष्ट हो तो कहना चाहिए—'यह तो मैं नहीं कह सकता कि अपने नन्हे-मुन्नों के बीच में रहने से मुझे खुशी नहीं होती थी, तो...।'

महाराज ने बड़े आश्चर्य की मुद्रा धारण कर मुझसे पूछा···।

—गुलाव राय (मेरी असफलताएँ)

साधारणतः 'मुद्रा' धारण नहीं की जाती, वह स्वाभाविक होती है। हाँ, कुछ विशिष्ट अवस्थाओं में वह वनाई अवश्य जाती है।

उक्त वाक्य का सरल और हलका रूप होगा—'महाराज ने अत्यन्त आश्चर्यचकित होकर पूछा...।' अथवा—'महाराज ने आश्चर्यमयी मुद्रा वनाते हुए पूछा...।'

वकील उदास चेहरे से सुनता रहा।

—श्रीकृष्ण गुप्त (क्रांतिकारी रमणी)

अजीव वात है। चेहरा, वह भी उदास और ऊपर से सुने भी! चेहरा सुनता नहीं है।

उक्त वाक्य के दो अच्छे रूप हो सकते हैं—

(क) वकील उदास होकर सुनता रहा।

(ख) वकील उदास वैठा सुनता रहा।

काश ! मैं उसके दुःख में सम्मिलित हो सकता।

—सुरजीत (मूक पाषाण)

दुःख में सम्मिलित होना अर्थहीन प्रयोग है। इसका यहाँ अगर कोई अर्थ हो सकता है तो यही कि मैं भी उसकी तरह दुःखी हो पाता। परन्तु लेखक का वास्तविक अभिप्राय तो यह है—काश ! मैं उसका दुःख बाँट पाता (फलतः उसका दुःखभार कुछ कम कर पाता)।

...आदर और गम्भीर होता गया।

—सम्पूर्णानन्द (भाषा)

आदर के साथ 'गम्भीर' का प्रयोग ठीक नहीं बैठता। प्रसंग को देखते हुए उक्त का अधिक स्पष्ट रूप होगा—आदर और बढ़ता गया।

राज्यपाल ने अपने अभिभाषण में यह आशा व्यक्त की कि ताशकन्द भावना भारत और पाकिस्तान के बीच मैत्री के क्षेत्र में और फैलेगी।

—आज

सीधा और सरल रूप होता—...कि ताशकन्द भावना से भारत तथा पाकिस्तान के बीच विभिन्न क्षेत्रों में मैत्री और सुदृढ़ होगी।

माँ ने अमलेश के लिए कभी कोई कठिनाई नहीं आने दी।

—रज्जन त्रिवेदी (राष्ट्र-भारती)

क्या किसी के लिए कठिनाई भी आने दी जाती है ? आप कह सकते हैं—

माँ ने अमलेश को कभी किसी कठिनाई का अनुभव नहीं होने दिया।

कतिपय समीक्षकों के कथन को कि हिन्दी निबन्ध पाश्चात्य साहित्य की देन है, इस धारणाको कभी...स्वीकार नहीं किया।

—डॉ० ओंकारनाथ शर्मा (साहित्य सन्देश)

'कथन को' और 'धारणा को' में कोई संगति नहीं बैठती। फिर 'धारणा...स्वीकार करना' भी कोई अच्छा प्रयोग नहीं है।

सरल रूप होगा—'उन्होंने कतिपय समीक्षकों की इस धारणा को ठीक नहीं माना कि हिन्दी निबन्ध पाश्चात्य साहित्य की देन है।

यहाँ 'ठीक' शब्द बहुत जँचता है।

काको का पति इसो कारण तो पानो में डूबकर जान दे दिया था।

—गुरुबचन सिंह (स्नेहमयी)

वाक्य उखड़ा-उखड़ा-सा लगता है। इसका स्पष्ट और व्यवस्थित रूप होगा—'काकी के पति ने तो इसी कारण पानी में डूब कर जान दे दी थी।

लड़के को उलझन-सी होने लगी। वह पीछे को............ और सिकुड़ गया।

—विमला राजकुमार (सारिका)

सिकुड़ता तो कोई अपनी जगह पर ही है। दाहिने, बाएँ या आगे पीछे नहीं सिकुड़ता। हाँ, सिकुड़कर पीछे हट सकता है। शायद लेखक का आशय रहा हो—'......वह सकुचाकर पीछे हट गया।'

ताशकन्द सम्मेलन की सफलता सोवियत संघ और अमेरिका के हितों की संकीर्णता को कम कर देगी और यही चीज एशिया में शान्ति के लिए सबसे अधिक आशाप्रद हो सकती है।

—दिनमान

'हितों की संकीर्णता' से यहाँ आशय स्पष्ट नहीं हो पाया। आशय तो तब स्पष्ट होता जब कहा जाता—'हितों के दृष्टि-कोण की संकीर्णता...।'

उक्त वाक्य में 'चीज' की जगह 'बात' होना चाहिए।

...(उसने टब को) गरम पानी से भरा और जल्दी-जल्दी अपने सब कपड़े उतार कर उसमें घुस गयी। आठ वर्ष की उम्र से लेकर इसमें कोई बुराई न समझते हुए वह इतनी बड़ी हुई थी।

—रमेशचन्द्र जोशी (अंकुर)

स्पष्टता तो तब आएगी जब कहा जाएगा—'......आठ वर्ष की उम्र से वह ऐसे ही नहाती चली आई थी। उसे इसमें कोई बुराई नजर नहीं आती थी।'

...बल्कि इसलिए कि हम दोनों एक ही मिट्टी से छूटे हुए दो ऐसे पौधे हैं जिन्हें धार्मिक परम्पराएँ एक दूसरे की ओर झुकने पर निषिद्ध करती हैं।

—सुरजीत (मूक पाषाण)

'निषिद्ध' का प्रयोग तो उस समय होता है, जब किसी बहुत बड़े पाप, अपराध या दोष की ओर संकेत होता है। सामान्य अवसरों पर यह उपयुक्त नहीं प्रतीत होता। 'मिट्टी से छूटा हुआ' स्थानीय प्रयोग है।

होना तो चाहिए—'......मिट्टी से उत्पन्न (निकले या बने) हुए दो ऐसे......एक दूसरे की ओर झुकने से रोकती हैं।

सिद्धान्ततः लोकतन्त्र पद्धति में चुनाव को दलील की काट नहीं हो सकती ।

—दिनमान

'दलील की काट' कोई बहुत अच्छा प्रयोग नहीं है। इससे वाक्य का आशय भी स्पष्ट नहीं होता। वह तो तब स्पष्ट होगा जब कहा जाएगा— 'सिद्धान्ततः लोकतन्त्र पद्धति में चुनाव को अवांछनीय नहीं कहा जा सकता है।'

अगर सलाद लेकर तुम नहीं लौटे तो तुम्हें मुझ से भुगतना पड़ेगा ।

—रमेशचन्द्र जोशी (अंकुर)

'तुम्हें मुझ से भुगतना पड़ेगा' अजीब सा लगता है। पूरे वाक्य का अच्छा रूप होगा—'अगर सलाद लेकर तुम नहीं लौटे तो मैं तुम से समझूँगा।'

शास्त्री जी बड़े दृढ़ हैं और अपने प्रधान मन्त्री बनने के बाद इस छोटे से अर्से में......।

—दिनमान

'अपने' बिलकुल व्यर्थ है और साथ ही भ्रामक भी। 'अपने प्रधान मन्त्री बनना' का अर्थ ही कुछ और होता है।

बड़े या छोटे दृढ़ कहने की अपेक्षा अधिक या कम दृढ़ कहना कहीं अधिक अच्छा है।

काम बैनर्जी के पास भी करने को अधिक नहीं था ।

—रामनारायण शुक्ल (प्रश्न का उत्तर)

'काम' तो किया ही जाता है इसलिए 'करने को' पद व्यर्थ है। उक्त वाक्य का और अधिक अच्छा रूप हो सकता है—'बैनर्जी के पास काम कुछ अधिक नहीं था ।'

नैपोलियन के पतन काल से लगाकर आज तक बेरियर का प्रत्येक वासी......।

—नेमिचन्द्र जैन

'लगाकर' भ्रामक तो है ही साथ ही बिलकुल फालतू भी है। इसे निकाल दीजिए और फिर पढ़िए—'नैपोलियन के पतन काल से आज तक बेरियर का प्रत्येक वासी......।'

प्रायः हरेक के घर में एक मोटर है ।

—डा० ब्रजमोहन

'के' फालतू है । इसके अतिरिक्त 'हरेक'[1] की जगह 'हर' यथेष्ट है ।... प्रायः हर घर में एक मोटर है ।

जब मुझे नैनीताल में आए थोड़े ही दिन हुए थे तब एक दिन......एक साहब मुझ से मिलने आए ।

—रमेशचन्द्र पाण्डेय

१—संधि व्यर्थ है । अधिकतर लेखक 'हर एक' ही लिखते हैं ।

'जब' और 'में' का प्रयोग यहाँ व्यर्थ है। 'तब' के स्थान पर 'कि' होगा। वाक्य का हलका और सुन्दर रूप होगा—'मुझे नैनीताल आए थोड़े ही दिन हुए थे कि एक दिन......।'

भोजन के उपरान्त उस दिन की घटित घटनाएँ उनकी आँखों के सामने नाचने लगीं।

—केशवमूर्ति (राष्ट्र-भारती)

घटनाएँ 'घटित' ही होती हैं, इसलिए 'घटित' यहाँ व्यर्थ है।

किसी भी कोशकार की एक विशेषता यह भी है।

—युगेश्वर (कल्पना)

'किसी भी' व्यर्थ है। यहाँ 'किसी' कोशकार की अपेक्षा नहीं है, बल्कि हर कोशकार की ओर संकेत है।

पन्द्रह वर्ष के पहले जो घटना घटी थी वह उसके स्मृति-पटल पर नाच रही थी।

—केशवमूर्ति (राष्ट्र-भारती)

'के पहले' में 'के' व्यर्थ है। वाक्य का और हलका रूप हो सकता है—'पन्द्रह वर्ष पहले की घटना उसकी आँखों के सामने नाच रही थी।'

उसकी बात-चीत में भावना का जोश नहीं होता था।

—देवेन्द्रकुमार वेदालंकार (इनसान या शैतान)

स्पष्ट नहीं होता कि लेखक क्या कहना चाहते हैं। शायद उनका आशय यह रहा हो—'वह बात-चीत के समय भावावेश में नहीं आता था।'

पत्र भद्दे खड़े लेख में लिखा था।

—श्रीकृष्ण गुप्त (क्रांतिकारी रमणी)

'लेख' का अर्थ लिखाई भी होता है परन्तु लेख में पत्र नहीं लिखा जाता। होना चाहिए—(क) पत्र की भाषा अटपटी और भद्दी थी। अथवा (ख) पत्र की लिखावट अस्पष्ट और भद्दी थी।

......मकबूल नामक ९ वर्षीय बालक को जिसे ज्यादा चोट लगी थी अस्पताल में भरती कर लिया गया तथा उसके ६ वर्षीय भाई मंजूर और पड़ोसी की १० वर्षीय लड़की को मरहम पट्टी के बाद बिदा कर दिया।

—आज

'विदा करना' का प्रयोग यहाँ उचित नहीं प्रतीत होता। विदा करने में मुख्यतः दो भाव होते हैं। एक तो सम्मानपूर्वक भेजने का और दूसरा टरकाने का। यहाँ दोनों में से कोई भाव अभीष्ट नहीं है। यहाँ तो 'घर जाने दिया' भर से काम चल सकता है।

२ : मनमानी हिन्दी

यदि भाषा शुद्ध न हो तो जो कुछ कहा जाएगा वह अभीष्ट से कुछ न कुछ भिन्न होगा। जो कुछ कहा जाए अगर वह अभीष्ट से भिन्न हो तो मानों वह काम ही पूरा नहीं हुआ जो हम करना चाहते थे।

—कनफूची

☆ ☆
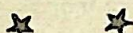
प्राय: देखने में आता है कि लोग या तो व्याकरण के नियमों से पूरें परिचित नहीं होते और यदि परिचित भी हों तो भी उनकी उपेक्षा या अवज्ञा कर जाते हैं। इधर जीवन के हर क्षेत्र में नियमों के उल्लंघन की प्रवृत्ति बराबर बढ़ रही है। यह ठीक है कि कुछ नियम सहज विकास में बाधक भी होते हैं, परन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि सब नियम ताक पर रख दिए जाएँ और इस प्रकार हर आदमी को मनमानी करने की छूट मिल जाए। अनुशासन-प्रशासन किसी सीमा तक आवश्यक भी है और समुचित भी।

यदि व्याकरण के किसी नियम की उपेक्षा से भाषा सजीव होती हो, उसमें निखार या लचीलापन आता हो तो उसका उल्लंघन इष्ट भी होगा और क्षम्य भी। ऐसे अवसरों पर मर्यादा भंग करना उचित है। परन्तु हम मर्यादा भी भंग करें और अपनी भाषा भद्दी, निष्प्राण और अस्वाभाविक कर दें, तो यह बात हमारे अज्ञान और उच्छृङ्खलता की ही सूचक होगी। यह बात ठीक है कि आज की कुछ भूलें कल को प्रयोग बन सकती हैं परन्तु इस बात को नियम के रूप में स्वीकार कर लेना ऐसी बहुत बड़ी भूल होगी जिसका फिर कभी परिमार्जन ही नहीं हो सकेगा।

हर भाषा की अपनी स्वतन्त्र प्रकृति होती है। वाक्य रचना का अपना स्वतन्त्र विधान होता है और बोलचाल के बँधे हुए अपने स्वतन्त्र प्रयोग होते हैं, जिनका ध्यान रखना ही पड़ता है। यदि कभी कहीं उनके सामान्य उल्लंघन से सौंदर्य की सृष्टि हो तब तो कुछ क्षम्य भी हो सकता है; परन्तु

अज्ञान और असावधानी के कारण बराबर उनके विपरीत आचरण करते रहना कैसे शोभन माना जा सकता है। ऐसा करने से भाषा के स्वाभाविक प्रवाह में बाधा पड़ती है और इस बाधा के कारण भाषा की सजीवता और स्वाभाविकता तो नष्ट होती ही है साथ ही समाज का सौन्दर्यबोध भी कुंठित होता है। फिर वह कला की बात नहीं रह जाती।

चाहे भाषा की प्रकृति के स्वरूप का ज्ञान हो, चाहे वाक्य-रचना की बात हो, शब्दों के प्रयोग का विषय हो, इनमें धीरे-धीरे और अभ्यासपूर्वक ही पूर्णतः प्राप्त होती है। त्रुटियों तथा भूलों से बराबर सावधान रहकर ही अपनी रचनाओं को बचाया जा सकता है और ऐसी त्रुटियों तथा भूलों से बचने की प्रवृत्ति तो सतत् सजगता से ही उत्पन्न, विकसित तथा पुष्ट होती है। यदि स्वभाव से ही आप नियम विरोधी हों तो भी प्रयास से प्रयोग प्रेमी बनिए। नियमों से चिढ़ हो तो प्रयोगों से प्यार कीजिए। अपने कान ऐसे बनाइए कि भाषा की खटक आपको चौंका दे। फिर आप जो भाषा लिखेंगे वह सजीव भी होगी, स्वाभाविक भी, सार्थक भी और साथ ही मनोहर तथा हृदयग्राही भी।

भाषा की प्रकृति न जाननें अथवा प्रमाद में उसकी अवहेलना का परिणाम यह होता है कि वाक्य अनगढ़ से लगते हैं या फिर उनका वास्तविक आश्य से भिन्न कोई दूसरा ही आशय निकलता है। ये दोनों ही बातें ऐसी हैं, जिनकी गिनती दोषों में होती है और जो लेखक को जनप्रिय नहीं होने देतीं।

अब आइए हिन्दी प्रांगण में—

अगर कश्मीर समस्या का कोई उचित हल न निकाला गया तो भारत-पाक सम्बन्धों का सारा ढाँचा ही बिखर जाएगा।

—दिनमान

'ढाँचा' बिखरता नहीं, वह तो टूटता या ढहता है। हाँ, उसके अंश या अवयव अवश्य बिखरते हैं। यदि ढाँचे के साथ बिखरने की विवक्षा लाना ही चाहें तो कहना होगा—'…… सारा ढाँचा ही तहस नहस हो जाएगा।'

अचानक वार्तालाप रूपी बाढ़ दण्ड विधान की ओर बढ़ने लगी।

—केशवमूर्ति (राष्ट्र भारती)

प्रसंग से लेखक का आशय यह प्रतीत होता है। '‥ सहसा बात-चीत का विषय बदल गया और दण्ड विधान पर बातें होने लगीं।'

उनकी आँखों को अभी गौर से देखा जाय तो उनमें एक खास तरह की चमक दिखाई देती थी।

—मोहन राकेश (जो कहें पाप करें पापा)

'अभी देखा जाए' और 'देती थी' में कोई संगति ही नहीं बैठती। अच्छा रूप होगा '…गौर से देखने पर उनकी आँखों में एक खास तरह की चमक दिखाई देती थी।' अथवा 'गौर से देखने पर उनकी आँखों में एक खास तरह की चमक दिखाई देगी।'

शोरबेदार सब्जी में दो एक मसाला और पड़ता……।

—अमरकान्त (पराई माँ)

'दो-एक' बहुवचन में ही आता है, एक वचन में नहीं। जैसे—वहाँ दो-एक आदमी आए थे। उक्त वाक्य का रूप होना चाहिए—'.......दो-एक मसाले और पड़ते......।'

रसोई घर में अँगीठी पर पतीली रखकर मीना सब्जी छौंकने को तैयार है। गिरजा का स्वर दूर से सुन पड़ता है।

—शशि प्रभाशास्त्री (दो सपने एक डोर)

'सब्जी छौंकने को तैयार है' कोई बढ़िया प्रयोग नहीं है। सब्जी छौंकने के लिए तैयारी करने की बात तो समझ में आती है परन्तु 'छौंकने को तैयार' में 'तैयार' जँचता नहीं। हिन्दी प्रयोग होगा—'.......मीना सब्जी छौंकने को ही है' अथवा '...मीना सब्जी छौंकने ही जा रही है कि इतने में गिरिजा का स्वर दूर से सुनाई पड़ता है।'

'.......दूर से सुन पड़ता है।' भी हिन्दी की प्रकृति के विरुद्ध प्रयोग है। 'सुन' की जगह 'सुनाई' ही होना चाहिए।

जब से यह पुस्तक लिखी गयी है अब तक उसका संसार की लगभग प्रत्येक भाषा में अनुवाद हो चुका है।

—नूरनबी अब्वासी (मुक्ति मार्ग)

'जब से.......अब तक' कोई अच्छा पद-समूह नहीं है। उक्त वाक्य का सुन्दर रूप होगा—'इस पुस्तक के लिखे जाने (बल्कि प्रकाशित होने) के बाद से आज तक संसार की लगभग प्रत्येक भाषा में इसका अनुवाद हो चुका है।'

मैं अभी-अभी अपने मकान मालिक के पास से होकर लौटा हूँ।

—आर० एस० भारद्वाज (धरती के देवता)

'के पास से होकर' यहाँ कुछ जँचता नहीं है।

उक्त का बढ़िया हिन्दी रूप होगा—'अपने मकान मालिक से मिल कर सीधे चला आ रहा हूँ।'

उसका गौरव नारी की सीमाओं से भी परे है।

—डॉ० धर्मपाल मैनी (कबीर के धार्मिक विश्वास)

'गौरव...परे है।' विचित्र वाक्य है। डॉ० महोदय अपनी बात नहीं कह पाए। वे शायद कहना चाहते थे—'उसका गौरव नारी के गौरव की सीमा से भी और आगे बढ़ा हुआ था।'

'परे है' से तो अभिप्राय होगा—अलग और दूर है। फिर नारी की कोई सीमा नहीं होती। सीमा तो उसके गौरव की ही होती है। 'गौरव' का प्रयोग इसी कारण दोबारा करना पड़ा।

इसके अतिरिक्त 'गौरव' की 'सीमा' ही होगी 'सीमाएँ' नहीं।

दुबली, पतली, नाटी-सी साधारण-सी लड़की बहुत सुन्दर नहीं, केवल सुन्दर लेकिन बात-चीत में बहुत दुलारी।

—डॉ० धर्मवीर भारती (गुनाहों का देवता)

'केवल' और 'लेकिन' दोनों शब्द यहाँ उपयुक्त नहीं बैठते। वाक्य का अधिक सुन्दर रूप होगा—'...बहुत सुन्दर नहीं फिर भी सुन्दर और बात-चीत में बहुत प्यारी।'

'दुलारी' की जगह 'प्यारी' ही होना चाहिए। दुलारी होने में स्वयं उसका कोई कर्तृत्व नहीं है। प्यारी होने में ही उसका अपना कर्तृत्व है। 'दुलारा' व्यक्ति ही होता है, उसका कोई कार्य या रूप नहीं।

...तेज-तेज कदमों से वह वहाँ से चल पड़ी।

—सुरजीत (मूक पाषाण)

'तेज-तेज कदमों से चलना' हिन्दी प्रयोग नहीं है। होना चाहिए—....तेजी से वहाँ से चल पड़ी।

भरसक गम्भीरता से मुन्ने ने उत्तर दिया

—वीरेन्द्र (उर्वशी)

मुन्ने में गम्भीरता! वाक्य का यह रूप शायद अधिक अच्छा होता—'मुन्ने ने अपनी तरफ से गम्भीर बनकर उत्तर दिया।'

पुलिस अधिकारी प्रतिहिंसा की भावना से उन्मत होकर जो भी सामने आया उस पर अंधाधुंध प्रहार करते थे।

—आज

वाक्य की भाषा से यह आशय भी ग्रहण किया जा सकता है कि जो प्रतिहिंसा की भावना से उन्मत होकर पुलिस के सामने आया उस पर पुलिस ने प्रहार किया।

होना चाहिए—'पुलिस अधिकारी प्रतिहिंसा की भावना से उन्मत हो गए थे और जो सामने आया उस पर......।'

काकी के यहाँ एक राजेन्द्र नाम का व्यक्ति भोजन करने आता था।

—गुरुवचन सिंह (स्नेहमयी)

होना चाहिए—'काकी के यहाँ राजेन्द्र नाम का एक व्यक्ति भोजन करने आता था।'

वह (हिन्दी) एक सम्मिश्र नागरिक भाषा है जिस को लोग हाट-बाट में काम में लाते हैं और घर-द्वार पहुँचकर फिर अपनी मूल बोलियों से काम लेने लग जाते हैं।

—जैनेन्द्र कुमार (देश की भाषा...)

'भाषा (या बोली) से काम लेना' और 'उसे काम में लाना' कोई अच्छे प्रयोग नहीं हैं। ऐसे प्रसंगों में 'बोलना' क्रिया ही भली लगती है। अंतिम पदांश का रूप होना चाहिए—'...और घर-द्वार पहुँच कर फिर अपनी-अपनी बोली बोलने लग जाते हैं।'

'मूल' शब्द यहाँ निरर्थक है।

मैं कूद कर घोड़े पर सवार हुआ और बिना आगे-पीछे देखे पश्चिम की ओर घोड़ा दौड़ा दिया।

—डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी (चारुचंद्र लेख)

'मैं' उद्देश्य के साथ 'हुआ' क्रिया पद की तो संगति बैठती है, परन्तु उसकी संगति 'दौड़ा दिया' क्रिया पद से नहीं बैठती। 'देखे' के बाद और 'पश्चिम' से पहले 'मैंने' होना चाहिए।

'कूदना' में ऊपर उछलकर नीचे आने का भाव होता है। यहाँ 'कूदकर' की जगह 'उछलकर' होना चाहिए। 'उलछना' वेगपूर्वक ऊपर की ओर उठने का द्योतक है। जैसे—वह उछलकर पेड़पर जा पहुँचा और फिर वहाँ से कूद कर जमीन पर आ गया।

प्रत्येक शाम को भोजन के कमरे में श्रीमती शेन्ते और पालिन में एक ही बातें हुआ करतीं।

—सूर्य नारायण (जीने के लिए)

इस वाक्य के दो अच्छे रूप हो सकते हैं। यो तो '...एक ही बात हुआ करती' या फिर '...एक ही तरह की बातें हुआ करतीं।'

कुछ थक कर उन्होंने अपनी निगाहें उठाईं।

—गंगासरन पाण्डेय (मृग तृष्णा)

मुहावरा 'निगाहें उठाना' नहीं है बल्कि 'निगाह उठाना' है। होना चाहिए—कुछ थकने पर उन्होंने निगाह उठाई।

मैं समझता हूँ कि इस समय मैं सम्पूर्ण हिन्दी जगत का प्रतिनिधित्व कर रहा हूँ, यानी मेरा किया हुआ अभिनन्दन सम्पूर्ण हिन्दी जगत का अभिनन्दन है।

—किशोरीदास वाजपेयी (साप्ताहिक हिन्दुस्तान)

वाक्य का अर्थ लेखक के आशय से भिन्न है। 'मेरा किया हुआ अभिनन्दन' से लेखक का दरअसल आशय है—मेरे द्वारा किया हुआ अभिनन्दन। परन्तु उनके शब्दों से यह अर्थ नहीं निकलता। उनके शब्दों से तो उस अभिनन्दन की ओर संकेत होता है जो स्वयं उनका किया जा चुका है। निश्चय ही यह आशय लेखक को अभिप्रेत नहीं है।

भारत-पाकिस्तान संघर्ष तय करने में सोवियत संघ की सद्भावना...

—सोवियत भूमि

'संघर्ष' तय नहीं किया जाता वह तो 'रोका' या 'समाप्त किया जाता है'।

यह भारत देश मानों धर्म प्राणता द्वारा सदा से एक बना चला आ रहा है और नाना मत सम्प्रदाय उसमें समावेश पाते गये हैं।

—जैनेन्द्रकुमार (देश की भाषा)

'समावेश पाना' कोई साधु प्रयोग नहीं है। 'समावेश होना' साधु प्रयोग है। वाक्य का रूप होगा—'...और नाना मतों और सम्प्रदायों का उसमें समावेश होता रहा है।' अथवा....'नाना मत और सम्प्रदाय उसमें समाविष्ट होते रहे हैं।

'द्वारा' की जगह 'के आधार पर' होना चाहिए।

यदि मुहावरों का इस दृष्टि से अध्ययन किया जाए तो यह सत्य स्पष्ट हुए बिना नहीं रहेगा कि अधिकांश मुहावरे जीवन के विविध क्रिया-व्यापार से संबंधित हैं।

—डा० गोविन्द चातक (गढ़वाली भाषा के मुहावरे)

'विविध' विशेषण के साथ संज्ञा बहुवचन में होना चाहिए। वाक्य का ठीक रूप होगा—.:....जीवन के विविध क्रिया-व्यापारों से सम्बन्धित (सम्बद्ध) हैं।

इतना लिखकर पुष्कर का हाथ फिर रुक गया।

—सुरजीत (मूक पाषाण)

कुछ लिखकर तो हाथ रुकेगा ही; इसलिए 'लिखकर' की जगह 'लिखते लिखते' होना चाहिए।

प्रस्ताव में अपील की गई है कि....प्रशासन तत्काल सन्तोष दिला सकने वाला कदम उठाए।

—आज

इसी भाव को अधिक सुन्दरता से हम कह सकते हैं—'......कि प्रशासन को तत्काल संतोषजनक कारंवाई करनी चाहिए।'

वार्डरोब से सिन्दूरी साड़ी का सेट निकालती हूँ, केस से हीरों का सेट भी निकालती हूँ, जो मुझे पहली विवाह की वर्षगाँठ पर अमिताभ ने दिये थे।

—प्रतिभा वर्मा (अमिताभ)

'पहली विवाह की वर्ष गाँठ पर' की जगह 'विवाह की पहली वर्ष गाँठ पर' होना चाहिए।

इस सम्प्रदाय ने अपनी जितनी लोकप्रियता के साथ अपना प्रभाव स्थापित किया है, उतना दूसरे सम्प्रदायों ने नहीं।

—डा० अम्बाप्रसाद सुमन (माध्यम)

'लोक प्रियता' के साथ यहाँ 'के साथ' खपता नहीं। होना चाहिए—.........इस सम्प्रदाय ने लोकप्रिय हो कर जितना प्रभाव स्थापित किया......।

वाक्य में 'अपनी' और 'अपना' दोनों निरर्थक हैं।

मैं दूसरे दिन रात के समय........बासे में नहीं गया था।

—गुरुवचन सिंह (स्नेहमयी)

हिन्दी में 'दिन रात' पद के रूप में भी चलता है और साथ ही ये दोनों शब्द विरुद्धार्थक भी हैं। 'दिन' की जगह यहाँ 'रोज' ही अधिक अच्छा प्रतीत होता है।

इसी के अनुसार मीरा का जल के समान..........सुन्दरता और निर्मलता देखकर राव दूदा जी ने उन्हें 'मीरा' कहा होगा।

—डा० भगवानदास तिवारी (मीराँ नाम : एक समस्या)

'दूदा जी ने उन्हें मीरा कहा होगा' से कहीं अच्छा रूप होगा—"दूदा जी ने उनका नाम 'मीरा' रखा होगा।' किसी को 'मीरा कहना', और बात है और किसी का नाम 'मीरा रखना' और बात।

वर्तमान समय में भारत का प्राचीन इतिहास क्रमबद्ध रूप में उपलब्ध नहीं होता।

—सत्यकेतु विद्यालंकार (भारत का प्राचीन इतिहास)

'वर्तमान समय में...उपलब्ध नहीं होता' से ध्वनि यह भी निकलती है कि वर्तमान से भिन्न समय में...उपलब्ध होता है। 'होता' की जगह 'है' होना चाहिए। 'वर्तमान समय में' की अपेक्षा 'अभी तक' यहाँ अधिक अच्छा रहता।

हम उनके बारे में ठीक कोई भी उत्तर नहीं दे पाते।

—रामनारायण लाल (प्रश्न का उत्तर)

होना चाहिए—'हम उनके बारे में कोई ठीक उत्तर नहीं दे पाते।'

उसका जन्म पहली जनवरी सन् १८७२ को एलिक्जेंड्रोपोल नामक स्थान में हुआ जो ईरान से छूनेवाली रूसी सीमा पर स्थित है।

—बलवन्त सिंह (माध्यम)

'छूनेवाली......सीमा' कोई अच्छा प्रयोग नहीं है। हिन्दी रूप होगा—...जो रूस की उस सीमा पर है जो ईरान से मिलती है।

यह नाटक है, अथवा यह नाटक नहीं है। दोनों में कोई भी स्थिति हो, लेखक उसके होने से इन्कार करना नहीं चाहेगा।

राजकमल चौधरी (माध्यम)

'चाहेगा' नहीं बल्कि 'चाहता है' होना चाहिए क्योंकि स्थिति तो वर्तमान है। हम इस प्रकार भी कह सकते हैं—...'लेखक उससे इन्कार नहीं करता।'

वह हर गुज़रनेवाले को विज्ञापन दे रहा था।

—रामनारायण शुक्ल (प्रश्न का उत्तर)

इस वाक्य का स्वाभाविक और सुन्दर रूप होगा—वह हर राह-चलते को विज्ञापन दे रहा था।

विषय-वस्तु में आप भारतीय संस्कृति और प्राचीन साहित्य की ओर उन्मुख हैं, जिसमें उनका ठोस बौद्धिक चिन्तन, शास्त्रीय विवेचन, सनातन जीवन-दर्शन, सहज सरल भाषा में अभिव्यक्त हुआ है।

—डा० कैलाश चन्द्र भाटिया
(आ० द्विवेदी के निबन्धों की भाषा-शैली)

'आप' और 'उनका' पर ध्यान दीजिए। 'आप' का संबंधकारक में रूप होगा—'आपका', 'उनका' नहीं। यदि 'उनका' रखना ही अभीष्ट हो तो 'आप' के स्थान पर 'वे' होना चाहिए।

वे सभी पूरे आस्तीन की कुर्तियाँ पहने थीं।

—यशपाल (चलनी में अमृत)

'आस्तीन' स्त्रीलिंग है पुंलिंग नहीं। 'पूरे' के स्थान पर पूरी होना चाहिए। फिर, पूरी आस्तीन की कुर्तियाँ, बोलचाल का प्रयोग भी नहीं है। 'पूरी बाँह की कुर्तियाँ' उससे कहीं अच्छा है।

मेरी बात से इरा को सान्त्वना मिली। तेरह वर्ष की हो गई थी तो क्या, थी तो बच्चा ही।

—यशपाल (चलनी में अमृत)

उर्दू के विचार से यहाँ 'बच्चा' का प्रयोग उपयुक्त है। परन्तु हिन्दी की प्रकृति के अनुसार 'बच्ची' ही होना चाहिए।

जैसे नाक छिनकी जाती है, उसी आसानी से उसको बच्चे पैदा होते हैं।

—अमर कान्त (पराइ माँ)

'जैसे' का मेल 'उसी आसानी से' नहीं बैठता। मेल तो तब बैठेगा जब कहा जाएगा—'जिस आसानी से नाक छिनकी जाती है, उसी आसानी से......।'

अभी घना अँधेरा घिरा था।

—विमला राजकुमार (सारिका)

'घिरा' के स्थान पर 'छाया' क्या अधिक शोभा नहीं देता ? 'अँधेरा घिरना' कोई बोलचाल नहीं है, 'अँधेरा छाना' ही प्रचलित प्रयोग है।

यद्यपि काश्मीर की जनता का प्रतिनिधित्व ताशकन्द में नहीं हो रहा था, तथापि निर्णयों से ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करने में मदद मिलेगी जिन में वे अपने भविष्य का स्वतन्त्र निर्णय कर सकें।

—दिनमान

वाक्य का निर्वाह ठीक प्रकार से नहीं हुआ। 'जनता' के विचार से 'वे' की जगह 'वह' होना चाहिए और वाक्य का रूप होना चाहिए—'... जिसमें वह अपने भविष्य का स्वतंत्र निर्णय कर सकेगी।'

उसकी धारा अब उन प्राचीरों के सैकड़ों फीट नीचे बहती है।

—नेमिचन्द्र (सुर्ख और स्याह)

'फीट' की जगह 'फुट' ही रहना चाहिए। अंग्रेजी वहुवचन रूप लेने की आवश्यकता नहीं है।

देखने में शास्त्री जी राजनयज्ञ नज़र नहीं आते पर पश्चिमी स्तर के अनुसार वह राजनयज्ञों के तौर-तरीकों से अच्छी तरह वाकिफ हैं।

—दिनमान

'स्तर' शब्द यहाँ खपता नहीं है। उसकी जगह 'धारणा' या 'विचार धारा' होना चाहिए। जब क्रिया आदरार्थक वहुवचन है तो 'वह' सर्वनाम भी अपने वहुवचन रूप 'वे' में आना चाहिए।

उस समय गत २४ जनवरी को दशाश्वमेध थाने पर हुए कांड की प्रतिक्रिया भी पुलिस के मन पर काम कर रही थी।

—आज

होना चाहिए—'गत १४ जनवरी को दशाश्वमेध थाने पर हुए कांड का वदला लेने की भावना भी उस समय पुलिस के मन में थी।'

पिछले दिनों ही ब्रिटेन के नौ-सेना मन्त्री मेहिव ने प्रधान मन्त्री से मत-भेद के कारण मन्त्रिमण्डल से त्याग पत्र दिया...... उनके स्थान पर नए नौ सेना मन्त्री मलेलियो को नियुक्त किया गया।

—दिनमान

दूसरे वाक्य को जरा ध्यान से फिर पढ़िए। 'नए नौ-सेना मन्त्री को...नियुक्त किया।' यहाँ वस्तुत: नये नौ-सेना मन्त्री को नियुक्त करना अभीष्ट नहीं है। होना चाहिए—...उनके स्थान पर मलेलियों को नया नौ-सेना मन्त्री नियुक्त किया गया।

दोनों राजनेता श्री शास्त्री और श्री मुहम्मद अयूब खाँ ने सात दिनों तक एक वार्ता की जो जटिल और कठिन थी।

—सोवियत भूमि

क्या 'वार्ता' भी जटिल और कठिन होती है? वार्ता का विषय जटिल और कठिन अवश्य होता है, स्वयं वार्ता कठिन या जटिल नहीं होती। वाक्य का कुछ हलका और स्पष्ट रूप होगा—श्री शास्त्री और श्री मुहम्मद अयूब दोनों राजनेताओं ने सात दिनों तक कठिन और जटिल विषयों पर वार्ता की।

'राजनेता' यहाँ 'ने' परसर्ग से शासित होता है। यदि 'ने' वाक्य में अपने स्थान से कुछ हट-बढ़ गया है तो भी वह 'राजनेता' को शासित तो करता ही है। 'ने' के साथ 'राजनेताओं' रूप ही होगा।

'एक वार्ता' में 'एक' भी व्यर्थ है।

दोनों देशों के बीच सम्बन्धों को सामान्य बनानेवाली कठिनाइयों को दूर करने का उपाय बताता है।

—सोवियत भूमि

'सम्बन्धों को सामान्य बनानेवाली कठिनाई' कुछ अजीब प्रयोग है। कठिनाई कभी सम्बन्धों को सामान्य नहीं बनाती। हाँ, बिगाड़ती अवश्य है। सामान्य की जगह 'असामान्य' रखने से वाक्य कुछ स्पष्ट हो जाता है।

प्रीति अधिक से अधिक समय अपने को घर को सजाने बनाने में व्यस्त रहती।

—रज्जन द्विवेदी (राष्ट्र-भारती)

'प्रीति...समय...व्यस्त रहती' में 'व्यस्त रहती' का 'समय' से मेल नहीं बैठता। होना चाहिए—...सजाने-बनाने में लगाती।

अग्निकांड, लूट तथा सरकारी सम्पत्तियों पर आक्रमण की घटनाओं की लहर के बाद लहर जारी रहने के कारण पश्चिम बंगाल के नदिया जिले में सेना बुलानी पड़ी।

—आज

'घटनाओं की लहर के बाद लहर' कोई सुन्दर और साधु प्रयोग नहीं है। हिन्दी प्रयोग तो तब होगा जब कहा जाएगा—...घटनाओं का ताँता लगा रहने के कारण...।

जिन वस्तुओं का बाह्य रूप हमें सम्पूर्ण नहीं लगता, वे आत्मा के मुक्त बहाव में बाधा होने से सामने आती हैं।

विमल के० गुप्ता (भारती)

'बाधा होना' हिन्दी प्रयोग नहीं। हिन्दी प्रयोग 'बाधा पड़ना' है। ....बहाव में बाधा पड़ने से सामने आती हैं।

अभी वहाँ पर एक सिपाही तीन-चार बंगलों पर पहरा देने ....के लिए रखा हुआ था।

—रजनी पनिकर (सैनिक की पत्नी)

'अभी,' 'पर' और 'हुआ' ये तीनों शब्द फालतू हैं। 'हुआ' तो भ्रामक भी है।

'सिपाही...रखा हुआ था' तो कुछ वैसे ही है; जैसे कमरे में कुर्सी रखी हुई थी।

इस पुस्तक में उनका दार्शनिक का रूप भी लक्षित है और निबन्धकार का रूप भी।

—विश्वम्भर मानव (साहित्य संदेश)

या तो 'दार्शनिक' के बाद 'का' हटा दिया जाए, या फिर 'उनका' की जगह 'उनके' होना चाहिए।

'अभिव्यंजना वाद और कलावाद' निबन्ध में बाबू जी शुक्ल जी से कहीं अधिक प्रमाणिक भूमि पर हैं।

—डा० विश्वम्भर उपाध्याय (साहित्य संदेश)

'...भूमि पर हैं !' बहुत अच्छा प्रयोग नहीं है। उक्त वाक्य को इस रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है—अभिव्यंजना वाद और कला-वाद निबन्ध में बाबू जी की पृष्ठ-भूमि शुक्ल जी की अपेक्षा कहीं अधिक प्रामाणिक है।

एक गर्मियों की बात मुझे याद है।

—मोहन राकेश (जो कहें पापा, करें पापा)

'एक' बात का विशेषण है गर्मियों का नहीं। उसे बात से पहले रखना चाहिए—गर्मियों की एक बात मुझे याद है।

आज के नये जमाने में शब्द की कोई कीमत नहीं रही। इनसानियत महँगी हो गई है।

—रा० र० सर्वटे (राष्ट्र-भारती)

'शब्द की कीमत न रही' हिन्दी प्रयोग नहीं है। होना चाहिए—जबान की कोई कीमत नहीं रही।

'इनसानियत महँगी हो गई है' भी अच्छा प्रयोग नहीं है। 'महँगी' की जगह 'दुर्लभ' होता तो कुछ अच्छा रहता।

---

३ : जूठी हिन्दी

(अनुवाद में अंधानुकरण)

अपने भूले हुए स्वरूप की पुनः प्राप्ति आनन्द की अनुभूति है और जिसको आनन्द की अनुभूति हुई, वह निष्प्रयास उस अनुभूति का दूसरे तक प्रेषण कर सकता है और करता है।

— डॉ० सम्पूर्णानन्द

* *

अनुवाद वस्तुतः मूल की छाया होता है इसलिए उसमें मूल जैसा सौन्दर्य न होना स्वाभाविक ही है। साधारणतः अनुवाद में भूलें दो प्रकार की होती हैं। एक तो मूल लेखक का आशय ठीक से न समझने की भूल और दूसरे सामझे हुए आशय को ठीक से अभिव्यक्त न कर पाने की भूल। ये दोनों ही भूलें अक्षम्य हैं। अनुवादक को अपनी भाषा का तो पूरा पूरा ज्ञान होना ही चाहिए साथ ही उस भाषा का भी पूरा पूरा ज्ञान होना चाहिए जिस से वह अनुवाद करता है। अन्यथा दोहरी भूलों की सम्भावना अधिक रहती है।

बोल चाल, मुहावरों आदि का अनुवाद कभी कभी शोभनीय हो सकता है परन्तु सामान्यतः वह अशोभनीय ही होता है। किसी मुहावरे, पद आदि का अनुवाद करने से कहीं अच्छा होता है कि अपनी भाषा में से उसकी जोड़-तोड़ का कोई मुहावरा या पद खोजा जाए। भाषा तथा उसके शब्द-भंडार का व्यापक ज्ञान होने पर ही यह बात सम्भव है। परन्तु हम देखते हैं कि हमारे अधिकतर अनुवादक अपने मुहावरों, पदों आदि से परिचित नहीं होते और विदेशी मुहावरों, पदों आदि की चकाचौंध में आकर उनका अनुवाद करते हैं और इस प्रकार अपनी भाषा का रूप और सौन्दर्य विकृत करते हैं। उनके ऐसे ऐसे वाक्य देखने में आते हैं जो समझ में ही नहीं आते। अंग्रेजियत से भरी हिन्दी-देखकर कभी कभी तो सामान्य लोगों को भी बहुत कष्ट होता है।

जिन लोगों ने अंग्रेजी की कभी कोई शिक्षा नहीं पाई और न जिन का अंग्रेजी से कोई सम्पर्क ही रहा है वे भी अब अंग्रेजियत से भरी हुई हिन्दी देख और पढ़कर बहुत कुछ उसी का अनुकरण करने लगे हैं। अक्सर व्याख्यानों में लोग कहते हैं (क) मुझे कहने दीजिए।[१] (ख) मुझे यह कहने की आज्ञा दीजिए।[२] (ग) मैं यह कहना चाहूँगा।[३] आदि। जब आप भाषण कर ही रहे हैं, कह ही रहे हैं तब कहने दीजिए और आज्ञा दीजिए आदि में क्या तुक है। कह तो आप अभी रहे हैं और संकेत कर रहे हैं भविष्य का—कहना चाहूँगा।

You will go to Lucknow······के आधार पर लोग लिखते हैं—तुम लखनऊ जाओगे, उनसे मिलोगे और आती बार रेडियो लेते आओगे। भविष्य कथन के प्रसंगों में तो यह बात ठीक है परन्तु भविष्यत् कालिक प्रयोग के सम्बन्ध में यह बात जंचती नहीं। हिन्दी की प्रकृति के अनुसार रूप होना चाहिए—तुम लखनऊ जाना, उनसे मिलना और आती बार रेडियो लेते आना। यह भी रूप हो सकता है—तुम लखनऊ जाओ, उनसे मिलो और आती वार रेडियो लेते आओ।

हमारे निगम बाबा[४] लिखते हैं—मैं उन में आदर बुद्धि रखता हूँ[५]। जैसे अलमारी में पुस्तक रखी जाती है, क्या वैसे ही उनमें आदर-बुद्धि भी

---

१. Let me say.

२. Permit me to say.

३. I would like to say.

४. स्वामी निगमानन्द जी परम हंस ('आदर्श हिन्दी' के लेखक) जिन्हें अंग्रेजी से कोई वास्ता नहीं है।

५. I have respect for him.

रखी जाती है ? हिन्दी प्रयोग होगा—मेरे मन में उन के प्रति आदर है।

यह मजाक की वात नहीं है, दुःख की वात है, सोचने और विचारने की वात है। कभी कभी हम विदेशी रूप-रंग से ऐसे ढक जाते हैं कि हमें अपनी प्रकृति का ज्ञान ही नहीं होता। 'रात में डाका पड़ा।' क्या इस वाक्य में आप को विदेशी गंध मिल सकती है ? पूज्य मामा जी (पद्मश्री रामचन्द्र जी वर्म्मा) ने जब बताया कि इसका रूप होना चाहिए—'रात को डाका पड़ा।' तो मैं सहसा सहमत न हो सका और अपने पक्ष की वकालत करता रहा। परन्तु जब उन्होंने कहा कि 'शाम को चोरी हुई' यह ठीक है या 'शाम में चोरी हुई' यह ठीक है। तो उनकी वात समझ में आई। 'रात में' अर्थात् 'रात के अन्दर' डाका नहीं पड़ता। डाका तो मकान में पड़ता है। हिन्दी प्रकृति के अनुसार यहाँ 'को' ही होना चाहिए। कुछ और वाक्य लीजिए—

(क) वह दोपहर को आया।

(ख) रात को पानी वरसा।

(ग) रात को सिनेमा देखेंगे।

(घ) दिन को वहाँ चला जाएगा।

(ङ) कल संध्या को मेहमान आएँगे।

उक्त वाक्यों में 'को' ही ठीक है 'में' नहीं। यह 'में' आया कहाँ से ? निश्चय ही यह अंग्रेज़ी के in the night, in the evening आदि पदों से आया है।

'यदि आप सच वोलते हैं तो आप डरते क्यों हैं।' इस प्रकार के प्रयोग हम लोग प्रतिदिन देखते-सुनते हैं। यह वाक्य अंग्रेजी के If you speak truth••• की छाया से कलुषित है। 'यदि' अनिश्चयवाचक है और 'है' या 'हैं' निश्चयवाचक। दोनों में मेल नहीं बैठता। होना चाहिए—

यदि आप सच बोलते हों तो...। हमारी प्रकृति के अनुसार यही प्रयोग ठीक है। वाक्य का दूसरा रूप भी हो सकता है—जब आप सच बोलते हैं तब आप डरते क्यों हैं।

मेरा कहने का अभिप्राय यही है कि हमें विचार और निश्चयपूर्वक अपनी भाषा की प्रकृति की रक्षा करनी चाहिए अन्यथा हमारी भाषा अन्य भाषा-भाषियों की दृष्टि से जूठी कही तथा मानी जाएगी।

अब अनुदित वाक्यों के कुछ उदाहरण लीजिए। पहले स्वयं उनके परकीय तत्त्वों को पहचानिए और तब उन पर टीका देखिए।

उस यात्रा का उत्तर नहीं दिया गया।

—दिनमान

'The visit was not answered' का अनुवाद है। पहली बात यह है कि visit 'यात्रा' नहीं है' 'भेंट' है। भेंट अथवा यात्रा का 'उत्तर देना' हिन्दी प्रयोग नहीं है। होना चाहिए—'उस भेंट के बदले में वे भेंट करने नहीं आए।'

पाकिस्तानी लुटेरे बहुत से पशु उठा ले गये।

—आकाशवाणी

इसमें का 'उठा ले गये' अंग्रेजी के lifted away का अनुवाद है जो हिन्दी में ग्राह्य नहीं होना चाहिए क्योंकि पशु वस्तुतः उठाकर नहीं ले जाए जाते, हाँक कर ले जाए जाते हैं।

एरहार्ड अन्तिम रूप से भारत कब जाएँगे।

—दिनमान

'अन्तिम रूप से' अंग्रेजी के finally का अनुवाद है जो यहाँ ठीक नहीं बैठता। इस पद से आखिरी बार—बिलकुल आखिरी बार अर्थात् सदा के लिए भारत जाने की ध्वनि निकलती है जब कि लेखक का अभिप्राय इससे भिन्न है। Finally के उक्त दोनों अर्थ हैं, परन्तु उसका एक और अर्थ है—निश्चित रूप से। और यही अर्थ यहाँ अभिप्रेत है। वाक्य का रूप होना चाहिए—एरहार्ड निश्चित रूप से भारत कब जाएँगे।

कदाचित उक्त वाक्य का अधिक सुंदर और मुहावरेदार रूप होगा—एरहार्ड अंततः भारत कब जाएँगे। और यदि लेखक किसी प्रकार की चोट या व्यंग करना चाहता हो तो उसे कहना होगा—एरहार्ड आखिर भारत कब जाएँगे।

परमाणु आक्रमण के विरुद्ध अंतर्राष्ट्रीय आश्वासन की आवश्यकता है।

—दिनमान

यहाँ 'के विरुद्ध' नहीं खपता। यह अंग्रेजी के 'against' का अनुवाद है। Against के 'के विरुद्ध' के अतिरिक्त और भी अर्थ हैं और उनमें से एक अर्थ है—बचाव के लिए (या सुरक्षा के रूप में); जैसे—to take precaution againt fire. इस प्रकार उक्त वाक्य का अच्छा रूप होगा—पारमाणविक आक्रमण से बचाव के लिए यह आवश्यक है कि हमें अंतर्राष्ट्रीय आश्वासन मिले।

पंजाब सीमा आयोग की रिपोर्ट सरकार को समर्पित ।

—आज

यहाँ 'समर्पित' का प्रयोग उचित नहीं है । 'समर्पित' तो वह चीज की जाती है जो अपनी होती है । यहाँ तो सरकार ने स्वयं रिपोर्ट तैयार करवाई है इस लिए यहाँ समर्पण का कोई प्रश्न ही नहीं है । यहाँ तो सीधे सादे 'पेश' शब्द से काम चल सकता है । 'आज' का यह शीर्षक अंग्रेजी के Punjab boun dary commission report submitt- to the govt : का उल्था है । Submission में और अर्थों के साथ साथ प्रस्तुत करने का भाव भी गर्भित है जब कि समपर्ण में यह विवक्षा है ही नहीं ।

...मुझे उस रात उन्हीं की छत के नीचे ठहरना पड़ा ।

—आर० एस० भारद्वाज (धरती के देवता)

'...छत के नीचे ठहरना पड़ा' अंग्रेज़ी के '......took shelter under his roof का उल्था है, जिसका आशय है—किसी के यहाँ ठहरना ।

होना चाहिए—मुझे उस रात उन्हीं के यहाँ रुकना (या ठहरना) पड़ा ।

एक सप्ताह हुआ मैं लेडी हम्पशायर के यहाँ उसी स्त्री के बाद बैठा हुआ था ।

—रामस्वरूप दुबे (सौंदर्य की रेखाएँ)

'बाद' यहां पर अंग्रेज़ी के next शब्द के लिए आया है जो बहुत ही भ्रामक है। वाक्य का रूप होना चाहिए—...के यहाँ उसी स्त्री की बगल में बैठा हुआ था।

हिंदी की प्रकृति के अनुसार किसी के दाहिने, बाएँ, आगे या पीछे बैठा जाता है। किसी के पहले या बाद में बैठने का आशय समय के विचार से हो सकता है (जैसे—पहले वह आया बाद में मैं।) परन्तु स्थान के विचार से नहीं।

तुम जब किसी मालिक के लिए काम करते हो तो तुम्हारी अकेली सफलता यही होती है कि तुम काम को बिगाड़ो।

—अमृत राय (आदि द्रोही)

उक्त वाक्य का सीधा और सरल रूप हो सकता है—सिवाय मालिक का काम बिगाड़ने के तुम्हें कुछ नहीं आता।

रोम से वे लोग एक साफ दिन को सबेरे रवाना हुए....।

—अमृत राय (आदि द्रोही)

'Clear day' के लिए 'साफ दिन' आया है। हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल उक्त वाक्य का रूप होगा—'जिस दिन सुबह वे लोग रोम से रवाना हुए आस्मान साफ था।'

इस नये प्रदेश में आकर उस शेरनी ने अपनी नर-संहार की संख्या में २३३ के अङ्क और जोड़ लिये थे।

—रमेशचन्द्र पाण्डेय

अनुवादक के आशय को सरल शब्दों में हम इस प्रकार कह सकते हैं—इस नये प्रदेश में आकर उस नरभक्षिणी शेरनी (बाघिन ?) ने और भी ३०२ मनुष्यों की जानें ले लीं।

यह सवाल अपना उत्तर खोज रहा है।

—दिनमान

उक्त वाक्य अंग्रेजी के 'This question seeks its own answer, का कोरा अनुवाद है। अनुवादक महोदय ने वाक्य का आशय समझा ही नहीं है शब्दानुवाद भर कर दिया है।

उक्त वाक्य का सही रूप होगा—इस सवाल का सही जवाब ढूँढ़े नहीं मिल रहा है।

...तब मुझे विश्वास हो गया कि अब इस निदर्य पशु के उत्पात का समय बहुत सीमित हो गया है।

—रमेशचन्द्र पाण्डेय

यहाँ समय के सीमित होने का वस्तुतः प्रश्न है ही नहीं। अनुवादक महोदय का आशय है—'...कि अब इस निर्दयी पशु के दिन इने गिने ही रह गये हैं।'

यह शेरनी कुमायूँ में नेपाल से पूर्ण नर-भक्षिणी बनकर आई थी।

—रमेशचन्द्र पाण्डेय

उक्त वाक्य में 'पूर्ण' के स्थान पर 'पूरी' और 'बनकर के स्थान पर 'होकर' होना चाहिए। 'had become' का अनुवाद 'बनी थी' नहीं होगा 'हुई थी' होगा।

जब आकार-प्रकार का परिवर्तन होता है तब 'बनकर' का प्रयोग सही होता है; जैसे—वह बकरी (या शेरनी) गाय बनकर आई थी। परन्तु जब गुण या प्रवृत्ति का परिवर्तन होता है तब 'होकर' का प्रयोग ही प्रशस्त होता है; जैसे—वह बकरी (या शेरनी) मोटी (पतली या नरभक्षिणी) हो कर आई थी।

सरल और सीधा अनुवाद होगा—वह शेरनी नेपाल से पूरी-पूरी नरभक्षिणी हो कर आई थी।

...कोई भी व्यक्ति अपने प्रभाव या विशेषता द्वारा समस्या को दिशा देने की कोशिश नहीं कर रहा है।

—दिनमान

'दिशा देना' अंग्रेजी के to give direcison का शब्दानुवाद है जो निष्प्राण है। होना चाहिए था—...समस्या के समाधान का प्रयत्न नहीं कर रहा है।

......संयुक्त राष्ट्र पर अपना नैतिक वज़न रख दिया है।

—दिनमान

'वजन रख दिया है' अंग्रेजी के 'put moral pressure' का अनुवाद प्रतीत होता है जो बहुत ही भद्दा है। उक्त वाक्य का सीधा सा अनुवाद होगा—...संयुक्त राष्ट्र पर अपना नैतिक दबाव डाला है।

......श्रीमती इन्दिरा गान्धी को प्रधान मन्त्री चुनकर भारत ने अपनी समस्याओं का वास्तविक समाधान नहीं किया पर समाधान के एक भ्रम की रचना कर डाली।

—दिनमान

इसी का हिन्दी रूप होगा—......भारत ने अपनी समस्याओं का वास्तविक समाधान तो नहीं किया उलटे समाधान का भ्रम-जाल फैला दिया।

मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ कि मैंने तुम्हें पा लिया।

—रामस्वरूप दुबे (सौंदर्य की रेखाएँ)

शब्दानुवाद का यह सुन्दर नमूना है। उक्त का सरल और सुन्दर रूप होगा—मैं तुम्हें पाकर बहुत प्रसन्न हूँ।

———

४ : झूठी हिन्दी

(अँग्रेजी में चिन्तन और हिन्दी में लेखन)

जिस प्रकार जातियों और राष्ट्रों को अपनी जातीयता और राष्ट्रीयता का स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखने के लिए सदा प्रयत्नशील रहना पड़ता है और बाहरी आक्रमणों से अपने आप को सुरक्षित रखने के लिए सदा सजग रहना पड़ता है। उसी प्रकार हिन्दीवालों को भी अपने हिन्दीपन का स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये रखने और उसे बाहरी आक्रमणों से सुरक्षित रखने के लिए सजग रहना चाहिए।

—रामचन्द्र वर्म्मा (पद्मश्री)

★ ★
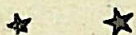
मुझे ऐसा लगता है कि हिन्दी भाषा अपनी मातृभाषा से उतना प्रेम नहीं करते जितना प्रेम दूसरे लोग अपनी मातृभाषा से करते हैं।

—स्मेकेल

बीस-तीस वर्ष पहले की बात है। पं० केशव प्रसाद जी मिश्र किसी आधुनिक कवि की कविता के एक चरण 'मेरे जीवन के अन्तिम पाहन' का आशय समझने के लिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के पास गए। और उनसे पूछा—'महाराज, यह क्या है।'

तब शुक्ल जी ने धीरे से कहा—'दयालु, यह प्रयोग अंग्रेजी के 'दी लास्ट माईल स्टोन आफ़, माई लाईफ़'[१] से लिया गया गया है।'

पं० केशवप्रसाद जी मिश्र की विद्वता में किसी को सन्देह नहीं हो हो सकता। वे अंग्रेजी भाषा के भी अच्छे खासे जानकार थे। परन्तु क्या यह आवश्यक है कि अपने वाक्यों का अर्थ लगाने के लिए हम अंग्रेजी के पंडित ही हों? क्या हमारी सोचाई अंग्रेजी ज्ञान के विना पंगु रहेगी?

अंग्रेजी शासन काल में अंग्रेजी के अध्यापक अपने विद्यार्थियों से कहा करते थे कि यदि अंग्रेजी में लिखना चाहते हो तो अंग्रेजी में सोचो। अब आज हिन्दी लेखकों से हम कहते हैं कि यदि आप हिन्दी में लिखना चाहते हों तो हिन्दी में ही सोचिए। हमारे अधिकतर लेखक तथा कवि विदेशी

१. Last milestone of my life.

लेखकों की रचनाएँ पढ़ते हैं और उनके नये नये प्रयोग तथा नये नये विचार भी आत्मसात् करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। कभी कभी ऐसा भी होता है कि हमारे लेखक ऐसे नये प्रयोगों से भी प्रभावित होते हैं जो ठीक से उनकी समझ में तो नहीं आते परन्तु जो आकर्षक शब्दों में सजे हुए होते हैं। हमारा विवश लेखक उन आकर्षक शब्दों का उलथा अपने सामर्थ्य के अनुसार करता है। और होता यह है कि उसकी दुर्बलता पकड़ी जाती है। कुछ हमारे ऐसे लेखक भी हैं जिनका अध्ययन अध्यापन अंग्रेजी में ही हुआ है और जो विशुद्ध राष्ट्र प्रेम से हिन्दी में लिखने लगे हैं। ऐसे लोगों का अंग्रेजी में सोचने का अभ्यास हीं बन गया है। अधिक अवस्था के कारण उनका अभ्यास तो नहीं बदल सकता, फिर भी उन्हें जागरूक तो होना ही चाहिए।

'जैसा राजा वैसी प्रजा' यह लोकोक्ति प्रस्तुत प्रसंग में भी अपनी चरितार्थता सिद्ध करती है। मुसलमानी शासन काल में यहाँ की प्रजा मुसलमानी-रंग ढंग का अनुकरण करती रही और अंग्रेजी शासन काल में अंग्रेजियत में अपने को रंगती रही। कुछ दुर्भाग्य ऐसा है कि मुसलमानी शासन काल का अंत हुए सौ वर्ष से अधिक हो गए फिर भी अब तक हम अपने को उनके रंग-ढंग से मुक्त न कर सके। अंग्रेजी शासन काल तो अभी कल की बात है और उसकी लादी तो हम स्वभावतः बहुत दिनों तक ढोएँगे ही। निश्चय ही अंग्रेजी समृद्ध भाषा है। उसके अध्येता पर उसकी छाप पड़ना भी स्वाभाविक है। परन्तु उसकी छाप हमारा आशय ही गोल कर जाए अथवा हमारी भाषा की प्रकृति ही विकृत कर दे, यह तो कोई बात न हुई।

हिन्दी वाटिका में सुन्दर पौधों के साथ लगे हुए परकीय झाड़ झंखाड़ भी हैं। प्रयत्न कीजिये कि ये अधिक फैलने न पाएँ और कहीं वाटिका का रूप ही कलुषित न कर दें। यहाँ हम यह भी कहना आवश्यक समझते हैं कि हिन्दीवालों की अपेक्षा अन्य भाषाभाषी अपनी अपनी भाषा

की प्रकृति की रक्षा के लिए अधिक सचेष्ट रहते हैं। यदि आप अन्य भारतीय भाषाओं के जानकार हों तो आप को उन से उतना अधिक असन्तोष नहीं होगा जितना कि हिन्दी भाषा से होता है। अब अंग्रेजों की सोचाई के कुछ नमूने देखिए :—

हमारे गृह मन्त्री महोदय ने उसे ही विराम, अर्ध-विराम बिना बदले ज्यों का त्यों सुना दिया है।

—आज

विराम और अर्धविराम शब्द अंग्रेजी के fullstop और coma के प्रभाव के द्योतक हैं। हिन्दी रूप होगा—बिना बिन्दु विसर्ग बदले हमारे गृह मंत्री ने उसे ज्यों का त्यों सुना दिया।

उनकी अवस्था अभी तक चिंता का कारण बनी है।

—आकाशवाणी

'It is still the cause of anxiety.' से ही 'चिंता का कारण बनी है' वाक्यांश हिन्दी में आया है।

हिन्दी की प्रकृति के अनुसार हलका और सीधा-सादा रूप होगा—उनकी अवस्था अभी तक चिंताजनक है।

प्रतिष्ठा की दौड़ से कोई भी मुक्त न था।

—दिनमान

'दौड़ से...मुक्त न था'से विवशता की ध्वनि निकलती है, जब कि उक्त वाक्य के मूल आशय से विवशता का कोई सम्बन्ध ही नहीं। उक्त वाक्य का सरल और सुन्दर रूप होगा प्रतिष्ठा के लिए होड़ लगी थी।

क्या विश्वविद्यालय सामाजिक नेतृत्व देने में सफल रहे हैं?

—डा० हरिहरनाथ त्रिपाठी (धर्मयुग)

'नेतृत्व देना' सम्भवतः giving the lead से लिया गया है। अंग्रेजी प्रयोग के अनुसार तो 'giving the lead' ठीक है, परन्तु हिन्दी प्रयोग की दृष्टि से 'नेतृत्व देना' निरर्थक है। यह सामान्य हिन्दी भाषी की समझ में आने लायक भी नहीं है। 'नेतृत्व करना' ही हिन्दी की प्रकृति के अनुसार ठीक होगा और वाक्य का रूप होगा—क्या विश्वविद्यालय समाज का नेतृत्व कर पाये।

उन दिनों स्वराज्य का नाम लेना अपने आप में राजद्रोह समझा जाता था।

—आकाशवाणी

इसमें का 'अपने आप में' अंग्रेजी के 'in itself' का अनुवाद है जो हिन्दी की दृष्टि से प्रायः निरर्थक है। होना चाहिए—'...... स्वराज्य का नाम लेना ही राजद्रोह समझा जाता था।'

जब हम मंत्रों की शक्ति का वर्णन पढ़ते हैं, तब इतने आश्चर्यचकित हो जाते हैं कि उसे असम्भव की कल्पना कह जाते हैं।

—गोविन्द शास्त्री (साप्ताहिक हिन्दुस्तान)

'असम्भव की कल्पना' और कुछ नहीं है 'Conception of the Impossible' का ही शब्दानुवाद है। सहज और स्पष्ट हिन्दी रूप होगा—......कि उसे कोरी कल्पना कह जाते हैं।

संसार के दूसरे छोर से गोष्ठी के समस्त सदस्यों को नमस्कार भेजता हूँ।

—डा० ब्रजमोहन

'नमस्कार भेजना' अंग्रेजी के 'Sending my greetings' की ही छाया से युक्त है। '...सदस्यों को नमस्कार भेजता हूँ' कुछ वैसा ही है जैसा कि...'आप के लिए आम भेजता हूँ।' 'नमस्कार भेजना' हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल नहीं है। होना चाहिए.......'समस्त सदस्यों को मेरा नमस्कार स्वीकार हो।'

और भी अधिक सरल और हलका रूप होगा—'...समस्त सदस्यों को मेरा नमस्कार।'

उन्हें खतरों से खेलने में मजा आता था और फिसलन भरे मार्ग की अपेक्षा ऊँचा उठानेवाला कठिनाइयों का रास्ता ज्यादा पसंद था।

—रामनारायण उपाध्याय (भारती)

अंग्रेजी का एक मुहावरा है—to play with fire. इसी के आधार पर 'आग से खेलना' मुहावरा उन लोगों ने बना लिया है जिन्हें यह पता

नहीं है कि हिन्दी में भी इस आशय का अपना मुहावरा है—आग से खेलवाड़ करना। 'खतरों में खेलना' भी 'आग से खेलना' का ही भाई-वन्धु है। होना चाहिए—उन्हें साहसिक कार्यों में मजा आता था....।

वाक्य का अंतिम अर्धांश तो विचित्र है और अनपचा भी।

भारतीय फौजों ने सद्‌भावना के बतौर कुछ एक जगहों पर उन चीजों की भी मरम्मत कर दी है.......।

—दिनमान

'कुछ एक जगहों' के स्थान पर 'कुछ जगहों' होना चाहिए। A few places की छाप का परिणाम ही है—कुछ एक जगहों।

श्री बाजपेयी ने यह आपत्ति भी की कि संसद से अनुमति लिए बिना ताशकन्द घोषणा की शर्तों को स्वीकार करने का अधिकार भारत सरकार के पास नहीं है।

—दिनमान

'अधिकार पास होना' कोई साधु प्रयोग नहीं है। साधु प्रयोग है—अधिकार प्राप्त होना। होना चाहिए—भारत सरकार को······नहीं है,' अथवा '...भारत सरकार को...प्राप्त नहीं है।' यहाँ अंग्रेजी के 'She has no right'. की छाप पड़ी हुई लगती है।

वियतनामी जनता जो २० वर्ष में अधिक समय से युद्ध करती आ रही है ....

—आज

सरल और स्पष्ट रूप होगा—वियतनामी जनता जो पिछले २० वर्षों में प्रायः युद्ध ही करती आ रही है।

तुम लोगों के यहाँ की नयी गाड़ी भी इसके सामने खड़ी नहीं हो सकती।

—आज

'खड़ी नहीं हो सकती' की जगह 'ठहर नहीं सकती' अधिक उपयुक्त तथा हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल है। 'ठहर नहीं सकती' तो 'can not stand' की ही कलुषित छाया है।

ताकन्द घोषणा के बाद अब यह कोशिश की जा रही है कि दोनों देशों के बीच के सम्बन्ध बेहतर हों और पाँच अगस्त के पहले का मौसम फिर से वापस आ जाए।

—दिनमान

जब लेखक महोदय उक्त वाक्य लिख रहे होंगे उस समय उनका ध्यान अंग्रेजी के season शब्द पर था। season का एक अर्थ है—ऐसा समय जिसमें कोई चीज बढ़ती, पनपती या फलती-फूलती हो। यह विचार तो बहुत बढ़िया था परन्तु 'मौसम' से तो वह भाव व्यक्त हुआ नहीं। कारण यह है कि अंग्रेजी के season में जो अर्थ है वह मौसम में नहीं है। कुछ और अवसरों पर संभव है कि यह आशय 'मौसम' से व्यक्त भी हो जाए परन्तु प्रस्तुत प्रसंग में 'पहले के मौसम' के स्थान पर 'पहले वाला समय' अथवा 'पहले की सी स्थिति' होना चाहिए।

इस भाँति जनभाषा हिन्दी के मूल को इतिहास में गहरा गया हुआ भी देखा जा सकता है।

—जैनेन्द्र कुमार (ज्ञानपीठ पत्रिका)

It root has gone deep in history की स्पष्ट छाया उक्त वाक्य पर दृष्टिगत हो रही है। क्या इतिहास में भी कोई चीज जाती है? इतिहास खोह या गुफा नहीं होता! उक्त वाक्य तो नये सिरे से ही लिखने लायक है।

समिति अनुभव करती है कि......वर्तमान जनक्षोभ कोई अप्रिय मोड़ ले सकता है।

—आज

लेखक के मस्तिष्क में उक्त वाक्य लिखते समय अंग्रेज़ी का यह वाक्य रहा होगा the present public agitation might take some unhappy turn. हिन्दी रूप होगा—वर्तमान जनक्षोभ उग्र रूप भी धारण कर सकता है।

शुक्ल जी को रसवादी आलोचक कहा गया है मैं आप से पूछूँगा कि क्या यह ठीक है?

—डा० वच्चनसिंह (माध्यम)

'मैं...पूछूँगा' अंग्रेजी के 'I would like to know की ही छाया से युक्त है। पूछ तो रहे हैं और कह रहे हैं—पूछेंगे। हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप तो होता—'....मैं पूछता हूँ कि क्या यह ठीक है?

श्री मती गाँधी की अमेरिका यात्रा का आयोजन शीघ्र करने की आवश्यकता अमुभव की जा रही है।

—आज

'आवश्यकता' का 'अनुभव' नहीं 'प्रतीति' होती है। होना चाहिए—...करने की आवश्यकता प्रतीत हो रही है।

खांड के मूल्य को सहारा देने के लिए सरकार की विशेष व्यवस्था....।

—आज

क्या 'मूल्य' को भी सहारा दिया जा सकता है?—अच्छा रूप तो होगा—'रूई का मूल्य स्थिर रखने के लिए सरकार की विशेष व्यवस्था... ।'

उन्होंने श्री सेन को समझाया कि उनका उनमें पूर्ण विश्वास है, फिर वे इस्तीफा क्यों देते हैं।

—आज

यह वाक्य अंग्रेजी के अप्रत्यक्ष कथन का उलथा है जो भ्रामक है। यहाँ समझानेवाले यदि कुछ अन्य लोगों के विश्वास का उल्लेख करते तब तो यह वाक्य ठीक था परन्तु जब वे स्वयं अपने विश्वास का उल्लेख कर रहे हैं तब वाक्य का रूप होगा—उन्होंने श्री सेन को समझाया कि हमारा आप में पूर्ण विश्वास है।

यदि वे लोग हमारे (अप्रत्यक्ष कथन के वक्ता के) विश्वास का उल्लेख करना चाहें तो वाक्य का अच्छा और स्पष्ट रूप तभी होगा जब कहा जाएगा—उन्होंने हमारे बारे में श्री सेन को समझाया कि हमारा उनमें............। और यदि अप्रत्यक्ष कथन का वक्ता जिससे बात कर रहा है उसके विश्वास का उल्लेख करना चाहता हो; तो कहना चाहिए—उन्होंने आप के बारे में श्री सेन को समझाया कि आप का उनमें पूर्ण विश्वास है ।

यद्यपि तार्किक तथा व्याकरणिक दृष्टि से उक्त कथन प्रकारों में दोष निकाले जा सकते हैं, परन्तु भाषा की प्रकृति और सामान्य लोक-व्यवहार की दृष्टि से यही प्रयोग अधिक स्पष्ट और कम भ्रामक हैं ।

ऐसा समझा जाता है कि भारत ने इन देशों की सरकारों से कहा है कि पाकिस्तान को शस्त्रास्त्र सम्बन्धी सहायता देने से उसकी सुरक्षा के लिए खतरा उत्पन्न होगा ।

—आज

'उसकी' की जगह 'हमारी' होगा तब जाकर कहीं उक्त वाक्य का आशय स्पष्ट होगा ।

'इनका जीवन बहुत घटना पूर्ण नहीं था ।'

—विश्वम्भर मानव (साहित्य सन्देश)

'Full of incidents' का भावद्योतन 'घटना' से संभवतया किया गया है । 'घटनाओं से भरा' कहीं अधिक स्पष्ट और सुबोध होता ।

सुख में, दुःख में, श्रम में, विश्राम में, नौकरी में, व्यापार में, सोने-चाँदी के सट्टे में, परिचितों के मिलने में, गाय-भैंस पालने में, तात्पर्य यह है कि सभी कहीं उन्होंने अपने विनोद की सामग्री ढूँढ़ ली।

—विश्वम्भर मानव (साहित्य सन्देश)

'सभी कहीं' हिन्दी का मान्य प्रयोग नहीं है। अंग्रेजी के every where की ही यह याद दिला रहा है। 'सब जगह' या 'हर जगह' होना चाहिए।

सरकार ने इस विषय में सदन को विश्वास में नहीं लिया।

—आकाशवाणी

'विश्वास में नहीं लिया' वस्तुतः 'did not take into confidence' का अनुवाद है जिसे बिना अंग्रेजी पढ़ा कोई आदमी किसी तरह समझ ही नहीं सकता।

हिन्दी रूप हो सकता है—

(क) सरका ने इस विषय में सदन को विश्वास पात्र नहीं समझा।

सुकरात तब पहुँचा, जब दूसरे लोग भोजन पर जुटने लगे थे।

—इलाचन्द्र जोशी (धर्मयुग)

यहाँ यह 'पर' अंग्रेजी के 'at' की छाया है। 'उन्होंने चाय पर बुलाया', 'मैंने भोजन पर बुलाया' आदि प्रयोग नित्य देखने में आते हैं। 'भोजन पर जुटना' इसी वर्ग का प्रयोग है।

हिन्दी प्रकृति के अनुसार 'पर' के स्थान पर 'के लिए' का प्रयोग ही प्रशस्त प्रतीत होता है।

---

५ : अनुपयुक्त शब्द-योजना

जहाँ तक लेखक की जटिल वैयक्तिक अनुभूति का सवाल है, यदि वह अपनी अनुभूति के प्रति ईमानदार है और शब्दों के सिक्कों के व्यवहार में पटु हो गया है, तो कोई कारण नहीं कि उस की अभिव्यक्ति दुर्बोध हो।

—कन्हैयालाल ओझा

उपयुक्त शब्द का उपयुक्त स्थान पर प्रयोग करना अभ्यास, योग्यता तथा प्रतिभा पर आश्रित होता है। प्राय: देखने में आता है कि लोग असावधानी के कारण किसी एक शब्द के स्थान पर दूसरे शब्द का प्रयोग कर जाते हैं। कभी-कभी किसी शब्द का प्रयोग अनुपयुक्त स्थान पर उसकी आर्थी या प्रायोगिक क्षमता का गलत अनुमान करके भी कर दिया जाता है। कुछ अवस्थाओं में किसी शब्द के स्मृति-पथ पर न आने के कारण भी उसकी जगह किसी अनुपयुक्त शब्द का प्रयोग किया जाता है।

कारण चाहे जो हो वाक्य में आनेवाला अनुपयुक्त शब्द रास्ते की ठोकर के समान होता है। उसके कारण वाक्य का स्वाभाविक प्रवाह भी रुकता है, आशय भी विकृत होता है और साथ ही लेखक की असावधानी भी झलकती है।

भाषा प्रभावोत्पादक हो इसके लिए आवश्यक है कि आप जिस शब्द का प्रयोग करें, तौल कर करें। हर शब्द का अपना अर्थ होता है और साथ ही उसका अपना क्रिया-क्षेत्र होता है। हमें हर शब्द के अर्थ को समझना चाहिए और उसके क्रिया-क्षेत्र का ध्यान रखना चाहिए। हमें किसी के अधिकार और व्यक्तित्व के साथ खिलवाड़ करने का दुस्साहस नहीं करना चाहिए।

समस्त—सम्पूर्ण

प्रायः समस्त काम अपने ही हाथों से करना पड़ता है।

—डा० व्रजमोहन

'समस्त' में एक का नहीं बल्कि अनेक का भाव है। 'सम्पूर्ण' में एक का भाव है अनेक का नहीं। या तो होना चाहिए—प्रायः सम्पूर्ण काम अपने ही हाथों करना पड़ता है। अथवा—प्रायः समस्त काम अपने हाथों करने पड़ते हैं। 'अपने हाथों' ही पद है 'अपने हाथों से' नहीं। 'अपने हाथ से करना पड़ता है।' भी ठीक है।

दुःखपूर्ण—दुःखद

लाल बहादुर शास्त्री की मृत्यु बहुत ही दुःखपूर्ण थी।

—सोवियत भूमि

'मृत्यु...दुःखपूर्ण थी' से आशय यह है कि उन्हें मरते समय बहुत कष्ट हुआ। और 'मृत्यु...दुःखद थी' से आशय यह है कि उनकी मृत्यु से (दूसरों को) बहुत अधिक दुःख हुआ। उक्त वाक्य वस्तुतः इसी दूसरे प्रसंग में आया है।

स्वीकृत—स्वीकार्य

वे परस्पर स्वीकृत निर्णयों की तलाश में थे।

—सोवियत भूमि

'स्वीकृत' का अर्थ है—जो स्वीकार किया गया हो। और 'स्वीकार्य' का अर्थ है—जिसे स्वीकार किया जा सके।

होना चाहिए—वे ऐसे निर्णयों की तलाश में थे जो परस्पर स्वीकार्य हों। इसका अधिक अच्छा रूप होगा—वे ऐसे निर्णयों की तलाश में थे जो दोनों (या अधिक) पक्षों को स्वीकार्य हों।

●

पुकारना—कहना

चीनवाले रूस की नीति को संशोधनवाली नीति कहकर पुकारते हैं।

—आकाशवाणी

'पुकारना' का प्रयोग उसी दशा में होना चाहिए जब किसी को अपने पास बुलाने या उसका अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए जोर से आवाज दी जाए। यहाँ तो होना चाहिए—······संशोधन वाली नीति कहते हैं।

●

आशंका—उम्मीद

आनेवालों के कारण मेरे सम्मान में वृद्धि की जरा भी आशंका नहीं थी।

—शिवशंकर त्रिवेदी (अनोखी तृप्ति)

'आशंका' किसी अनिष्ट बात के संबंध में होती है। 'सम्मान में वृद्धि' कोई अनिष्टता सूचक बात नहीं है। यहाँ 'आशंका' की जगह 'उम्मीद' होना चाहिए। 'के कारण' भी भ्रामक है। 'के द्वारा' अधिक अच्छा होता।

प्रदक्षिणा—यात्रा

पुण्य-भावना में साधु-अन्त और यात्री गिरिस्तो तीर्थों और धामों की प्रदक्षिणा करते हुए एक से दूसरे देश में घूमते रहे हैं।

—जैनेन्द्र कुमार (देश की भाषा)

तीर्थों और धामों की प्रदक्षिणा नहीं बल्कि यात्रा की जाती है। 'प्रदक्षिणा' किसी केन्द्र के चारों ओर घूम कर की जाती है। फिर 'प्रदक्षिणा करते हुए' लोग एक देश से दूसरे देश कैसे पहुँचेंगे यह भी विचारणीय है।

सावधानी लेना—सावधानी बरतना

किन्तु हमें यह सावधानी लेनी होगी कि विश्व की जूठन समेट कर हम विश्व को उपहार देने का स्वाँग न भरने लगें।

—माखनलाल चतुर्वेदी (समय के पँख)

'सावधानी' ली नहीं जाती रखी या बरती जाती है। 'सावधानी' के के साथ 'रखना' और 'बरतना' क्रिया प्रयोग ही भले लगते हैं।

चुप्पी अपनाना—चुप्पी साधना

...नियंत्रण के प्रश्न पर अपनायी जानेवाली जिदभरी चुप्पी के लिए....।

—दिनमान

'चुप्पी' अपनायी नहीं जाती, साधी जाती है। हिंदी का अपना मुहावरा है—चुप्पी साधना।

टिकाऊ—स्थायी

हमारी वर्तमान कठिनाइयाँ और विपत्तियाँ टिकाऊ नहीं हैं।

—आकाशवाणी

इसमें का 'टिकाऊ' विशेषण बहुत ही अनुपयुक्त है। टिकाऊ का उपयोग ऐसी ही वस्तुओं के सम्बन्ध में होता है और होना चाहिए जो अधिक समय तक ठीक दशा में रहकर अच्छा और पूरा काम दे सकें।

टिकाऊपन वस्तुओं का सद्गुण है और इसी लिए यह अभीष्ट तथा वांछनीय होता है। परन्तु कठिनाइयों और विपत्तियों के सम्बन्ध में कभी यह नहीं कहा जा सकता कि वे टिकाऊ फलतः अभीष्ट या वांछनीय हैं।

वाक्य का रूप होगा—हमारी वर्तमान कठिनाइयाँ और विपत्तियाँ स्थायी नहीं है।

●

चित्र उठाना—चित्र लेना

हमारी तसवीरें खींचनेवाले उनकी ओर देखे बिना चित्र उठा रहे हैं।

—आज

'चित्र उठाना' कोई बोलचाल नहीं है। 'चित्र लेना' सीधा सा प्रयोग है।

●

के प्रश्न पर – के विषय में

साहित्य में मनोवैज्ञानिकता के प्रश्न पर भी बाबूजी प्रयोग-वादियों की अपेक्षा अधिक प्रगतिशील हैं।

—डा० नत्थासिंह (साहित्य संदेश)

'के प्रश्न पर' की अपेक्षा 'के विषय में' अधिक सरल भी है और सार्थक भी। 'प्रश्न पर···प्रगतिशील है' का तो कोई अर्थ ही नहीं होता।

●

भूमि—भूमिका

हालाँकि इस घोषणापत्र में कुछ भूमि तैयार कर ली गयी है, पर वह काफी नहीं है।

—दिनमान

'भूमि' की जगह या तो 'भूमिका' होना चाहिए या फिर 'पृष्ठ-भूमि।' अंग्रेजी के back-ground शब्द के लिए, यहाँ 'भूमि' आया है।

●

लम्बा—दीर्घकालीन

अपभ्रंश में ऐसे कहे प्रेमाख्यानक काव्यों की लम्बी परम्परा मिलती है।

—डा० देवेन्द्रकुमार शास्त्री (सम्मेलन पत्रिका)

परम्परा लम्बी अथवा चौड़ी या छोटी नहीं होती। परम्परा दीर्घकालीन या अल्पकालीन होती है अथवा पुरानी या नई होती है।

●

प्रयुक्त—सँजोया

सतसइयों में प्रयुक्त हुए न जाने कितने दोहे जन-जन के कंठहार बने हुए हैं।

—डॉ० रमासिंह (सम्मेलन पत्रिका)

सतसई (या किसी अन्य ग्रंथ) में दोहे (या रचनाएँ) प्रयुक्त नहीं होतीं बल्कि संकलित की या सँजोयी जाती हैं।

●

बाद देना—बाद करना

अन्य भाषाओं के पाठकों को बाद दे दिया जाए तो हिन्दी के पाठक वाकई बहुत कम रह जाते हैं।

—कन्हैयालाल ओझा (आधुनिकता बोध)

मुहावरा 'बाद देना' नहीं बल्कि 'बाद करना' है।

रूप लेना—रूप धारण करना

पर यह कार्य इतनी सहजता से हो गया, इसी में कुछ खटका जान पड़ रहा था और कहना न होगा कि अब उसकी छाया धीरे-धीरे स्पष्ट रूप ले रही है।

—दिनमान

'रूप लेना' हिन्दी प्रयोग नहीं है। हिंदी प्रयोग है—'रूप धारण करना।' 'रूप प्राप्त करना' भी ठीक है।

फेंकना—छोड़ना

मैं इस मृगशिशु को जीवित पकड़ना चाहता था, इस पर बाण फेंकने की इच्छा नहीं थी।

—हजारीप्रसाद द्विवेदी (चारुचंद्र लेख)

बाण या तीर फेंका नहीं जाता वरन् छोड़ा या चलाया जाता है। फेंका तो भाला या बरछा जाता है अथवा फिर गोला या पत्थर फेंका जाता है।

अँटना—भरना

पार्टीशन के बाद शहर जैसे लोगों से अँट गया है।

—दिनेश आचार्य (इकाई, दहाई, सैकड़ा)

यहाँ 'अँटना' की जगह 'भरना' का ही प्रयोग उपयुक्त होगा। 'अँटना में समाई अर्थात् पूरा पड़ने की मुख्य विवक्षा है (जैसे—यह कमीज बच्चे को अँट जाएगी।) जो उक्त वाक्य में अभिप्रेत नहीं है; जब 'कि भरना' में अधिकता या प्रायुर्य की मुख्य विवक्षा है (जैसे—उसका सारा शरीर बालों से भरा है।) जो वस्तुतः उक्त वाक्य में अभिप्रेत है।

एक—कोई

लोग लालटेनें लिये सावधानी से जहाज की तलाशी लेने लगे। जहाज का एक कोना भी नहीं छोड़ा गया।

—परमानन्द गौड़ (पिशाच की प्यास)

'एक कोना भी नहीं छोड़ा गया' के स्थान पर होना चाहिए—कोई कोना भी नहीं छोड़ा गया।

पका—पकाया

…होटल में…मुझे…किसी नये ढंग से पका हुआ मुर्गा मिला।

—परमानन्द गौड़ (पिशाच की प्यास)

'पका' की जगह 'पकाया हुआ' होना चाहिए। मुर्गा स्वयं नहीं पकता, बल्कि पकाया जाता है।

गरमी—गरमाहट

···सैलीनास नदो ··के पानी में कुछ गरमी होती है।

—उपेन्द्रनाथ अश्क (ये आदमी–ये चूहे)

'कुछ गरमी' के स्थान पर 'गरमाहट' शब्द होना चाहिए। वाक्य का और अच्छा रूप तो तब होगा जब कहा जाएगा–···सैलीनास नदी··· का पानी कुछ कुछ (अथवा अधिक) गरम होता है।

★

और—पर

आयु-क्रम के अनुसार मुझे अधिक गतिशील होना चाहिए था, किन्तु मैं दोनों में से किसी के साथ समझौता न कर पाया, और बाबू जी की उदारता दोनों को निरन्तर मान देती रही।

—डा० नगेन्द्र (साहित्य सन्देश)

'और' कुछ अवस्थाओं में 'पर' का आशय भी व्यक्त करता है; जैसे–वह गालियाँ देता रहा और मैं सुनता रहा। परन्तु ऐसे प्रसंगों में दोनों क्रियाओं के होते या चलते रहने की विवक्षा भी निहित है। उक्त वाक्य में 'और' के स्थान पर 'पर' ही समीचीन है।

★

को—में

आज काम करने को उसका मन नहीं लग रहा था।

—गुरबेलसिंह पन्नू (आज दिन ही अशुभ चढ़ा था)

'को' के स्थान पर 'में' होना चाहिए। किसी चीज 'में' मन लगता है। किसी चीज 'को' मन नहीं लगता।

⊙

को लेकर—के सम्बन्ध में

यदि उसके लेख पर मैं नाराज होता उसे भला-बुरा कहता या उससे उसकी मान्यताओं को लेकर बहस करता तो निश्चय ही उसे संतोष होता,......।

—उपेन्द्रनाथ अश्क (माध्यम)

"मान्यताओं को लेकर बहस करना" कुछ भला नहीं लगता। यहाँ 'को लेकर' के स्थान पर 'के सम्बन्ध में' ही अच्छा रहेगा।

---

१. ...हमारे यहाँ यह 'को लेकर' बहुत कुछ बँगला की कृपा से और कुछ कुछ मराठी की कृपा से आया है। पर है यह सर्वथा त्याज्य। अच्छे लेखकों को इससे बचना चाहिए।

—रामचन्द्र वर्म्मा (अच्छी हिन्दी पृ. १८४)

को लेकर—के आधार पर

इसी भाव को लेकर आचार्य यास्क ने अपने निरुक्त में अक्षर का पहला अर्थ यह किया है—

—सिद्धेश्वर वर्म्मा (भाषा)

'को लेकर' बहुत ही भद्दा प्रयोग है। 'के आधार पर' होना चाहिए।

को लेकर—के कारण

भागवत में श्री कृष्ण ने बताया है कि जो प्रेम करने पर प्रेम करते हैं उनका सारा उद्योग लेन-देन मात्र है, वह स्वार्थ को लेकर है।

—डा० रामदत्त भारद्वाज (सम्मेलन पत्रिका)

'को लेकर' की जगह 'के कारण' होना चाहिए।

पर—का

पिछले वर्षों में उन्होंने उस विषय पर बहुत अधिक अनुभव और ज्ञान प्राप्त किया था।

—गंगासरन पाण्डेय (मृगतृष्णा)

ज्ञान तो किसी विषय 'का' प्राप्त किया जाता है। 'किसी विषय 'पर' ज्ञान प्राप्त किया था' का तो कुछ अर्थ ही नहीं होता।

⊙

पर—के लिए

भावना-प्रधान प्राणी होने के नाते देश-कल्याण और जनहित पर उन्होंने अपने आप को समर्पित कर दिया।

—भगवतीचरण वर्मा (ये सात और हम)

किसी 'पर' समर्पण नहीं किया जाता। सामान्य हिन्दी प्रयोग के आधार पर कह सकते हैं कि व्यक्ति 'को' समर्पण किया जाता है और कार्य 'के लिए' समर्पित किया जाता है। जैसे—

क—उन्होंने अपनी पुस्तक राष्ट्रपति को समर्पित की।

ख—देश के लिए उन्होंने अपनी सेवाएँ समर्पित कीं।

'जनहित पर' के स्थान पर 'जनहित के लिए' ही श्रेयस है।

⊙

मे—पर

उस छोटे-से मृगछौने की परेशानी से मुझे दया आ गई।

—हजारीप्रसाद द्विवेदी (चारुचंद्र लेख)

'परेशानी से' के स्थान पर 'परेशानी पर' होना चाहिए। जिस प्रकार किसी की नालायकी पर गुस्सा आता है अथवा किसी की बेवकूफी पर हँसी आती है, उसी प्रकार किसी की परेशानी पर दया आती है। 'परेशानी से···दया आ गई' का तो कुछ अर्थ ही नहीं होता।

⊙

पर—में

रात के लगभग एक बजे जब सारे गाँव पर निस्तब्धता थी।

—सुरजीत (मूक पाषाण)

'पर' के स्थान पर 'में' होना चाहिए। यदि 'पर' ही रखना अभीष्ट हो तो वाक्य का रूप होगा—'···सारे गाँव पर निस्तब्धता छाई थी।' मिलान कीजिए :—

गाँव में विषाद था।
नगर में शोक था

गाँव पर विषाद छाया था।
नगर पर शोक छाया था।

⊙

लगातार—प्रायः

पेड़ का तना लगातार लोगों के बैठने के कारण चिकना हो गया है।

—उपेन्द्रनाथ अश्क (ये आदमी—ये चूहे)

यहाँ 'लगातार' ठीक नहीं जँचता। यहाँ 'प्रायः' ही उपयुक्त है। और वाक्य का रूप होना चाहिए—लोगों के प्रायः बैठने के कारण पेड़ का तना चिकना हो गया था।

⊙

उसकी—मेरी

देसाई को अफसोस था कि उसकी माँ अपने जवान लड़के की जरूरतों को क्यों नहीं समझती।

—गुरवेलसिंह पन्नू (आज दिन ही अशुभ चढ़ा था)

'उसकी' की जगह 'मेरी' होना चाहिए।

⊙

७

में—पर

सड़क में जो लोग भी मिलते उन्हें वह झुक कर अभिवादन करता।

—नरेन्द्र राना (लालस)

'में' की जगह 'पर' होना चाहिए। और वाक्य का सहज रूप होना चाहिए—सड़क पर उसे जो कोई दिखाई पड़ता उसे वह नमस्कार करता।

में—पर

इस विवादग्रस्त विषय में मैंने बहुत पहले विचार करना प्रारंभ कर दिया था।

—शिवशंकर त्रिवेदी (अनोखी तृप्ति)

'में' की जगह 'पर' होना चाहिए। विचार तो किसी बात या विषय पर ही किया जाता है।

के लिए—का

डरने के लिए वक्त नहीं है। लगता है कि लोग अपना डर भूल गये हैं।

—परमानन्द गौड़ (पिशाच की प्यास)

'डरने के लिए वक्त नहीं हैं' से ध्वनि यह भी निकलती है कि यदि वक्त हो तो हम डर भी सकते हैं। 'के लिए' के स्थान पर 'का' होना चाहिए।

●

से—का

दिल्ली से आये हुए कुछ कैमरामैन और फिल्म खींचने वालों ने तकाज़ा किया कि हम असैनिक क्षेत्र से कुछ तसवीरें लेना चाहते हैं।

—आज

'तकाज़ा' पावने का किया जाता है। फोटो लेने के लिए 'तकाज़ा' कैसा! 'तकाजा किया' की जगह 'प्रार्थना की' या केवल 'कहा' होना चाहिए।

…'असैनिक क्षेत्र से कुछ तसवीरें लेना चाहते हैं' में 'से' की जगह 'की' होना चाहिए। यदि खरीदने का भाव अपेक्षित होता तो 'से' ठीक था।

●

के साथ—से

इस अपमान के साथ मेरे धैर्य का अन्त हो गया।

—आर. एस. भारद्वाज (धरती के देवता)

वाक्य का अर्थ हुआ—धैर्य का भी अन्त हो गया और उसके साथ अपमान का भी अन्त हो गया। होना चाहिए—इस अपमान से मेरा धैर्य जाता रहा।

के साथ—से

जन्म से लेकर सत्तार वर्ष की अवस्था तक की सभी महत्वपूर्ण घटनाएँ कहीं संकेत से और कहीं विस्तार के साथ इसमें वर्णित हैं।

—विश्वम्भर मानव (साहित्य सन्देश)

'संकेत से......वर्णित हैं' जैसे ठीक है वैसे 'विस्तार से...वर्णित हैं' भी ठीक है और सरल भी।
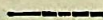
को—से

ऐसे उदास-खामोश क्षणों में न तो कभी माँ ही बहू को कुछ बोलती और न अमलेश ही।

—रज्जन त्रिवेदी (राष्ट्र-भारती)

किसी 'को' बोला नहीं जाता वरन् किसी 'से' बोला जाता है।

दूसरे हिन्दी की प्रकृति के अनुसार उदास और खामोश स्थिति तो हो सकती है परन्तु क्षण नहीं। 'क्षण' की अपेक्षा 'स्थिति' अधिक दीर्घकाल व्यापी भी है।

का—की

मुझे उनका यह उत्तर उनके अडिग कर्मनिष्ठा के अनुकूल लगा।

—रामनारायण उपाध्याय (राष्ट्र-भारती)

'उनके' के स्थान पर 'उनकी' होना चाहिए क्योंकि कर्मनिष्ठा स्त्रीलिंग संज्ञा है, पुंलिंग नहीं।

के साथ —से

शेष विषय तो कर्तव्य समझकर अरुचि के साथ पढ़ लेता था।

—गुलाव राय (मेरी असफलताएँ)

आशय होता है—अरुचि भी पढ़ लेता था और उसके साथ विषय भी पढ़ लेता था। 'अरुचि से' ठीक है। जैसे खुशी से पढ़ा जाता है, दुःख से पढ़ा जाता है वैसे अरुचि से भी पढ़ा जाता है। 'अरुचि से' की जगह 'अरुचि पूर्वक' अधिक अच्छा जँचता है।

---

६ : हिन्दी का अजायबघर

अभिव्यक्ति के अभाव में साहित्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती।

—सन्हैयाल ओझा

कोई ऐसा व्यक्ति……बिना इस बात की परवाह किये कि किसी को उसकी (मेरी) रचना समझ में आती है या नहीं, केवल आत्म-तृप्ति के लिए लिखता हो तो यह बात कहनी होगी कि वह भाषा के सामाजिक स्वरूप की हत्या करता है। ऐसे व्यक्ति की रचना साहित्य नहीं है और उसका मूल्य शराबी या वातग्रस्त रोगी के प्रलाप से अधिक नहीं है।

—सम्पूर्णानन्द

* *
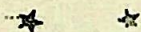
अब हम आप के सामने कुछ ऐसे वाक्य उपस्थित करते हैं जिन्हें 'हिन्दी के अजायब घर' में रखा जा सकता है। लेखक की लड़खड़ाती लेखनी कुछ लिखती भर है क्या लिखती है और क्यों लिखती है कुछ समझ में नहीं आता। ऐसे प्रसंगों में लेखक यदि पाठक के मानसिक स्तर की हीनता का उल्लेख करना चाहे तो उसे ऐसा करने की छूट नहीं है। शब्दों के गोरख-धंधे में दूसरों को फँसाने और किंकर्तव्यविमूढ़ करने की छूट उसे नहीं दी जा सकती।

अपने एक सहयोगी मित्र के ये शब्द मुझे चौंका देते हैं—हिन्दी में गोल-मटोल कहने और लिखने की पद्धति बहुत बुरी चल गयी है। ......हिन्दी में तो यथार्थ अभिव्यंजना का सर्वथा अभाव दिखाई देता है।

बिलकुल अकेलापन क्योंकि मुमकिन नहीं, इसी लिए शायद हममें से कुछ कभी कभी घबरा कर अकेला ही आना चाह उठते हैं।

—सुदर्शन चोपड़ा (ज्ञानपीठ पत्रिका)

विश्वविद्यालय में दुर्घटना के बाद छात्रों ने जो रुख अख्तियार किया, वह आचरण में सन्तुलन के अभाव की व्यापक

समस्या का ही अंग समझा जाना चाहिए था, लेकिन प्रशासन ने इसकी उपेक्षा करके जो रवैया अपनाया, उसके कारण सम्पूर्ण विश्वविद्यालय कुछ समय के लिए उत्तेजनाजनक प्रशासकीय बल के अधीन हो गया था।

—आज

सत्य मेरा, सत्य हर 'मैं' का। हर 'मैं' हर किसी का 'तुम' और 'वह'। हर 'मैं' 'तुम' और 'वह' के हर क्षण का सत्य अलग।

—सुदर्शन चोपड़ा (आधुनिकता बोध....)

सन् १८९० से १९१४ के बीच गूर्जियफ कई जगहों में घूमता रहा और रूसी सरकार की ओर से दस वर्ष तक अपनी सरकार का खुफिया एजेन्ट बन कर वह तिब्बत में रहा।

—बलवन्त सिंह

['अपनी सरकार का' पद यहाँ भ्रामक है और फलतः आशय भी अस्पष्ट है। शायद लेखक का आशय है—

रूसी सरकार की ओर से दस वर्ष तक तिब्बत में रहा और वहाँ अपनी सरकार के खुफिया एजेन्ट का काम भी करता रहा।

'कई जगहों में' का काम 'कई जगह' से अच्छी तरह चल सकता है।]

हिन्दी का इतिहास......बदलती हुई परिस्थिति एवं राजनीति के सबसे अधिक अधीन रहा है।

—जैनेन्द्र कुमार

इनके मनुष्यता के निरूपण में मनुष्य पशु भी है इसकी उपेक्षा है और पशु ही नहीं है इसकी अपेक्षा है।

—डा० इन्द्रनाथ मदान (आचार्य द्विवेदी : डाक्टर द्विवेदी)

जो लोकनृत्य मुख्यतया उससे सम्बन्ध होते हैं वे भी क्योंकि अब एक राष्ट्रीय उत्सव गणतन्त्र-दिवस के साथ जोड़ लिये गये हैं इसलिए होली प्रायः उनसे भी वंचित हो गई है।

—दिनमान

कभी मैं एक में एक को जोड़कर ट्रेन की बर्थ पर सोते हुए काटी गयी रातों की लम्बाई नापूं तो मेरी उम्र सत्रह की हो जाती है।

—रमेश वक्षी

...शायद पिछली सदी में नाराज़ पीढ़ी की जबान पर रखने के लिए उसने यह पंक्ति रची थी...।

—रमेश वक्षी

[ज़बान पर तो कोई चीज़ स्वाद चखने के लिए रखी जाती है। किसी की ज़बान पर पंक्ति रखने का क्या अर्थ है यह समझ में नहीं नहीं आया।]

इस दृष्टि से वह पतन की ओर जानेवाले लोगों के जीवनों का अंतिम यशस्वी परिचित और उनपर अच्छा प्रभाव डालने वाला अंतिम व्यक्ति होने का सौभाग्य रखता था।

—श्रीकृष्ण गुप्त

देवनागरी को देश की सारी भाषाओं की एक लिपि के रूप में स्वीकार करने पर अन्य भाषाओं की विशेषताओं की रक्षा के लिए देवनागरी की सामर्थ्य का पूरा लाभ उठाना होगा।

—कुसुमलता (भाषा)

बाबूजी की प्रतिभा विषय और व्यक्ति दोनों को लेकर चली है।

—विश्वम्भर मानव (साहित्य सन्देश)

['प्रतिभा' और वह भी चले! और साथ में कुछ लेकर चले! वाक्य का तो कुछ आशय ही समझ में नहीं आता।]

यदि मलयेसिया* की समस्या का राजनैतिक* हल नहीं निकाला गया, तो वह तथा अफ्रीकी राज्यों में अशान्ति की समस्याएँ थोड़े दिनों की बातें नहीं हैं।

—दिनमान

['थोड़ी दिनों की बातें नहीं हैं' से 'दिनमान' का आशय क्या है यह स्पष्ट नहीं होता ।]

आपने देने की क्षमता में गहरे डूबकर दूसरों के लिए कुछ कर सकने का सुख जाना है न ?

—संतोष बंसल (नई सदी)

क्या आपको याद है कि कब आपने अपने स्नेही को आपको कुछ दे पाने का गौरव दिया था।

—संतोष बंसल (नई सदी)

* मलयेसिया और राजनैतिक के अधिक प्रचलित तथा मान्य रूप हैं—मलेशिया और राजनीतिक ।

हमारे अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

१. वैज्ञानिक परिभाषा कोश १२)

सम्पादक : डा० वदरीनाथ कपूर

इस कोश में ज्ञान-विज्ञान के २० से अधिक विषयों के पारिभाषिक शब्दों की व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं।

२. शब्द और अर्थ ३)

लेखक : रामचन्द्र वर्म्मा

शब्दों और उनके अर्थों का सुन्दर विवेचन करनेवाली अपने ढंग का अनूठी पुस्तक।

३. नर भक्षी बाघों का शिकार ८)

लेखक : वी. एन. सिंह

अत्यन्त रोमांचक घटनाओं से भरी हुई एक साहसी शिकारी की यात्राओं का विवरण प्रस्तुत करनेवाली पुस्तक।